महाकवि भारवि विरचितम्

किरातार्जुनीयम्

प्रथम सर्ग

हिन्दी–संस्कृत व्याख्या सहित

व्याख्याकार

डॉ. जय श्री

(एम0 ए0, नेट, पीएच्0डी0)

ISBN : 978-93-91684-03-7
First Edition: New Delhi, 2022
Copyright 2022, डॉ0 जय श्री
डॉ0 सग राम वर्मा गणित एवं सांख्यिकी विभाग, विज्ञान संकाय गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय हरिद्वार उत्तराखण्ड
All rights reserved
Published by Isara Solutions

प्राक्कथन

संस्कृत भाषा सबसे प्राचीन भाषा है। यह भाषा अनेक भाषाओं की जननी हैं। इस भाषा के गोद में कई भाषाएं उत्पन्न होकर विकसित हुई है। संस्कृत–साहित्य में महाकाव्य का विशेष महत्त्व है। इस काव्य के लेखन की परम्परा अत्यधिक पुरानी है। इस महाकाव्य को विद्वानों ने विकसित तथा समृद्ध करने में अपना विशेष योगदान दिया है। मानव जीवन से सम्बन्धित समस्त विषय इस साहित्य में उपलब्ध हैं यथा– वेद, वेदाङ्ग, उपनिषद, ब्राह्मण, आरण्यक, दर्शन, व्याकरण, ज्योतिष, काव्य, महाकाव्य आदि। किन्तु यहाँ पर विशेष रूप से महाकाव्य के विषय में चर्चा की जाएगी। इस काव्य की परम्परा में कवियों के महाकाव्यों का अध्ययन करने से रसमय पद्धति एवं अलङ्कारमय पद्धति दिखाई देती हैं। इस पद्धति में कवियों की दृष्टि रसार्द्र होती है, जिसके कारण रसमयता, विषय की बहुलता, प्रसादमयी भाषा, अलङ्कार आदि का सहज प्रयोग किया जाता है। अलङ्कार शैली के जनक महाकवि भारवि है। इस पद्धति में महाकाव्य की कथावस्तु अल्प होती है और वर्णन विस्तार पूर्वक किया जाता है। इसमें एक छोटी सी कथावस्तु को लेकर कविगण प्राकृतिक वर्णनों द्वारा महाकाव्य को विस्तृत रूप देते हैं। अपनी अलंकृत शैली एवं काव्य में अन्य गुणों के कारण महाकवि भारवि संस्कृत–साहित्य के अत्यन्त लोकप्रिय कवि बन गये हैं।

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के प्रथम सर्ग की व्याख्या करने का प्रमुख उद्देश्य यह है कि लोकसेवा आयोग और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा इसे इण्टरमीडिएट, बी0 ए0 तथा अन्य परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है, यथाः यू0 पी0– टी0 जी0 टी0, पी0 जी0 टी0 तथा राष्टीयस्तर पर नेट, जे0 आर एफ इत्यादि। छात्र/छात्राओं के अध्ययन हेतु तथा तैयारी करने वाले परिक्षार्थियों को ध्यान में रखते हुए अत्यन्त सरल भाषा में इसका अनुवाद किया गया है। जिससे संस्कृत पढ़ने वाले सभी पाठकों के लिए ज्ञानवर्धक सिद्ध हो यही मेरी आकांक्षा है।

डॉ0 जय श्री।

आभार

वर्तमान समय में मेरे लिए सबसे शुभ दिन यह है कि माता सरस्वती के आशीर्वाद से पुस्तक का लेखनकार्य निर्विघ्न स्वरूप सम्यक् रूप से पूर्ण हुआ है। ऐसी पवित्र पावनी हंसवाहिनी के चरणों में बारम्बार प्रणाम करती हूँ। सरस्वती माता से सदा यही प्रार्थना करती रहूँगी कि इनकी छत्रछाया में रहकर भावी जीवन में सदैव ज्ञानमार्गी स्वकार्य के प्रति निष्ठापूर्वक संलग्न रहूँ। तत्पश्चात् अपनी माता श्रीमती तारा देवी और पिता श्री केशव राम वर्मा जी के कमलरूपी चरणों में हृदय से आभार व्यक्त करते हुए कोटि–कोटि प्रणाम करती हूँ। मेरे माता–पिता तथा मेरे बड़े भाईयों का शुभाशीर्वाद मुझ पर बना रहे यहीं हमारी कामना है।

डॉ0 जय श्री

(बी0ए0,एम0,नेट,पीएच्0डी0)

विषय सूची

भूमिका.. 1

काव्य का संक्षिप्त परिचय... 2

भारवि का जीवन परिचय–... 2

भारवि के माता–पिता का नाम– 2

भारवि की वंषावली– 3

भारवि का स्थितिकाल–.. 3

महाकाव्य का लक्षण– 4

कवि की उपाधि–... 6

किरातार्जुनीयम् की कथावस्तु का मूल स्रोत –... 9

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के सरांष का संक्षिप्त परिचय– 9

पात्रों का चरित्र–चित्रण–.. 12

किरातार्जुनीयम् पर लिखी गई टीकाएं–... 15

एक दृष्टि में महाकवि भारवि तथा किरातार्जुनीयम् का मुख्य परिचय–...................... 15

प्रमुख सारगर्भित सूक्तियां.. 62

अति लघु उत्तरीय महत्त्वपूर्ण प्रश्न... 63

भूमिका

संस्कृत–साहित्य जगत् में महाकाव्य की परम्परा अत्यधिक प्राचीन है। यह विश्व का सबसे विशाल एवं समृद्ध साहित्य हैं। यह साहित्य सागर इतना विशाल एवं अथाह है कि विद्वानों ने इस कविता कामिनी को सदैव संवारने का प्रयत्न किया है। साहित्य के क्षेत्र में कही महाकवि भारवि का अर्थगौरव प्रतिष्ठित है तो वहीं महाकवि दण्डी का पदलालित्य साहित्य को समृद्ध कर रहा है। आदिकवि वाल्मीकि ने धार्मिक ग्रंथ रामायण की रचना करके जिस काव्य परम्परा को जन्म दिया है, वह निर्बाध गति से आगे बढ़ती हुई आज भी गतिशील है। समय के साथ–साथ परिवर्तन होता रहता है और यह परिवर्तन साहित्य को प्रभावित करने से कही भी वञ्चित नहीं हैं। अर्थात् साहित्य को अवश्य प्रभावित करता है। यही परिवर्तन ही मानव जीवन में, कवि के शब्दों में नयापन लाने का कार्य करता है। संस्कृत–साहित्य में महाकवियों ने कालिदास के उपरान्त भावपक्ष की अपेक्षा कलापक्ष को विशेष महत्त्व दिया गया है। कलापक्ष को महत्त्व देने वालों में महाकवि भारवि का नाम सर्वोपरि स्थान पर है। कलापक्ष को जन्म देने वाले महाकवि भारवि है। परन्तु इनके अतिरिक्त अन्य विद्वान इसका प्रश्रेय महाकवि भट्टी को देते हैं, जिसका नाम विशेष उल्लेखनीय है।

संसार में भारतीय संस्कृति के गौरव को प्रतिष्ठापित करने का श्रेय संस्कृत भाषा की गौरवमयी काव्यधारा को दिया जाता है। यह देवभाषा का साहित्य है, जो विविध विधाओं से सम्पन्न हैं। मानव जीवन से सम्बन्धित समस्त विषय इस साहित्य में उपलब्ध हैं–वेद, वेदाङ्ग, उपनिषद, ब्राह्मण, आरण्यक, दर्शन, व्याकरण, ज्योतिष, काव्य, महाकाव्य आदि। ये संस्कृत भाषा के विकास में अपना विशेष योगदान प्रदान किये हुए हैं। यह संस्कृत भाषा विविध भाषाओं की जननी हैं। इसी के गोद में अनेकों भाषाओं ने अपना विकास किया है। विदेशी क्रान्तिकारियों ने इस भाषा के विशाल वाङ्मय को न जाने कितनी बार नष्ट किया, तथापि अनेक आपदाओं को सहन करते हुए भी यह साहित्य विश्व के साहित्यों में अपना विशेष स्थान प्राप्त किये हुए हैं। इस काव्य की परम्परा में कवियों के महाकाव्यों का अध्ययन करने से रसमय पद्धति एवं अलङ्कारमय पद्धति दिखाई देती हैं। इस पद्धति में कवियों की दृष्टि रसार्द्र होती है, जिसके कारण रसमयता, विषय की बहुलता, प्रसादमयी भाषा, अलङ्कार आदि का सहज प्रयोग किया जाता है। अलङ्कार पद्धति को आचार्य कुन्तक ने 'विचित्र मार्ग' कहा है। अलङ्कार शैली के जनक महाकवि भारवि है। इस पद्धति में महाकाव्य की कथावस्तु अल्प होती है और वर्णन विस्तार पूर्वक किया जाता है। इसमें एक छोटी सी कथावस्तु को लेकर कविगण प्राकृतिक वर्णनों द्वारा महाकाव्य को विस्तृत रूप देते हैं। अपनी अलंकृत शैली एवं काव्य में अन्य गुणों के कारण महाकवि भारवि संस्कृत–साहित्य के अत्यन्त लोकप्रिय कवि हैं।

काव्य का संक्षिप्त परिचय

किरातार्जुनीयम् महाकवि भारवि की रचना है। यह 18 सर्गों वाला महाकाव्य है, इसके प्रथम तीन सर्ग को **'पाषाणत्रय'** कहा जाता है। यह एक वृहद्त्रयी महाकाव्य है तथा कुछ प्रमुख महाकाव्यों की गणना बृहत्त्रयी–किरातार्जुनीयम् (भारवि) नैषधीयचरितम् (श्रीहर्ष) शिशुपालवधम् (माघ) के अन्तर्गत की जाती हैं। इसी प्रकार कतिपय महाकाव्यों की गणना लघुत्रयी के अन्तर्गत की जाती हैं, यथा– रघुवंशमहाकाव्य, कुमारसम्भवम् महाकाव्य, तथा मेघदूतम् महाकाव्य (तीनों कालिदास की कृत हैं)। इस काव्य की कथावस्तु महाभारत के वनपर्व से ली गई है। इसके नायक अर्जुन और नायिका द्रौपदी हैं। यह वीर रस प्रधान तथा पाञ्चाली रीति से युक्त महाकाव्य है। किरातार्जुनीयम् शब्द का संधि विच्छेद–किरात्+अर्जुनीयम्, व्यञ्जन सन्धि तथा किरातश्च अर्जुनीयश्च 'द्वन्द्व समास' है।। इस प्रकार किरातार्जुनीयम् में व्यञ्जन सन्धि, द्वन्द्व समास, और छ प्रत्यय हैं। बृहद्त्रयी महाकाव्यों का सूक्ष्म परिचय इस प्रकार है। जिसे इस सारणी के माध्यम से प्रदर्शित किया जा रहा है–

क्र. सं.	**बृहद्त्रयी ग्रंथों के नाम**	**रचनाकार**	**प्रमुख कथानक**	**मङ्गलाचरण**	**नायक–नायिका**	**सर्गों–संख्या**	**रस**
1.	किरातार्जुनीयम्	भारवि	महाभारत वनपर्व	वस्तुनिर्देशात्मक	अर्जुन–द्रौपदी	18 सर्ग	वीररस
2.	शिशुपालवधम्	माघ	महाभारत सभापर्व	वस्तुनिर्देशात्मक	नायक कृष्ण	20 सर्ग	वीररस
3.	नैषधीयचरितम्	श्रीहर्ष	महाभारत नलोपाख्यान वनपर्व	वस्तुनिर्देशात्मक	नल–दमयन्ती	22 सर्ग	शृङ्गाररस

भारवि का जीवन परिचय–

संस्कृत–साहित्य में अन्य महाकवियों की भांति महाकवि भारवि ने अपने जीवन के विषय में कुछ नहीं लिखा है। भारवि के महाकाव्य का अनुशीलन करने पर भी, इनके जीवन–वृत्त के विषय में कुछ प्राप्त नहीं होता है। कवि के यथार्थ जीवनवृत्त को जानना बड़ा कठिन कार्य है। तथापि उनके जीवन के विषय में कुछ किंवदन्तियां भी प्रचलित हैं। तदनुसार एक शिलालेख में भारवि के नाम का उल्लेख किया गया है कि वे दक्षिण भारत के निवासी थे। काव्यादर्शकार महाकवि दण्डी ने अपने पूर्वजों के विषय में कुछ लिखा है तथा अपने चतुर्थ पूर्वज दामोदर का नामोल्लेख किया है, उन्हीं दामोदर का अपर नाम भारवि है। अन्य किंवदन्ती के अनुसार भारवि धारानगरी के निवासी तथा भोजराज के समकालीन थे।

भारवि के माता–पिता का नाम–

कवि भारवि के माता का नाम **'सुषीला, पिता का नाम श्रीधर एवं पत्नी का नाम–रसिका'** था। भड़ौच के निवासी चंद्रकीर्ति की पुत्री रसिकवती से भारवि का विवाह हुआ था। दण्डी कृत **'अवन्तिसुन्दरीकथा'** के अनुसार भारवि पश्चिमोत्तर भारत में आर्य देश के आनन्दपुर नामक स्थान पर कौशिकवंशीय ब्राह्मण निवास करते थे। कुछ समय उपरान्त वहीं लोग, नासिक प्रदेश में स्थित अचलपुर में जाकर रहने लगे। वहीं अचलपुर का आज वर्तमान नाम एलिचपुर है। अचलपुर निवासी ब्राह्मण के परिवार में दामोदर की

उत्पत्ति हुई तथा वहीं दामोदर संस्कृत साहित्य में भारवि के नाम से विख्यात हुए है। उक्त कथा के अनुसार दण्डी के पितामह महाकवि भारवि थे।

महाकवि भारवि पल्लवनरेश सिंहविष्णु का राज्य आश्रय प्राप्त होने पर वहीं निवास करने लगे और वही पर भारवि के तीन पुत्र उत्पन्न हुए। उन्हीं तीन पुत्रों में से मनोरथ नामक पुत्र से वीरदत्त नामक पौत्र उत्पन्न हुआ जो दण्डी के पिता बने।

भारवि की वंषावली–

भारवि के पुत्र–मनोरथ। मनोरथ के पुत्र–वीरदत्त। वीरदत्त के पुत्र–दण्डी। इस प्रकार दण्डी भारवि के प्रपौत्र थे। यद्यपि भारवि के पिता उच्चकोटि के विद्वान् थे, पर भारवि उनसे भी बढ़कर थे। संस्कृत साहित्य में अलंकृत शैली के सामान्य कवि तथा सर्वश्रेष्ठ काव्यकार है। इनके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि इनका प्रारम्भिक जीवन निर्धनता के कारण कष्टमय व्यतीत हुआ था। इनकी एक मात्र रचना किरातार्जुनीयम् है, जो नीतिपरक श्लोकों में निबद्ध है। महाकवि भारवि शिव के उपासक थे।

भारवि का स्थितिकाल–

भारवि के जीवनवृत्त को निर्धारित करना अति दुष्कर कार्य है। परन्तु उनके स्थिति काल को जानना उतना कठिन कार्य नहीं है। भारवि के विषय में अन्तः एवं बाहय साक्ष्यों के आधार पर हमें जो जानकारी प्राप्त होती है उसे यहाँ प्रस्तुत किया गया है। कालिदास की रचनाओं का प्रभाव भारवि के काव्य में दृष्टिगत होता है और भारवि के काव्य का प्रभाव माघ के काव्य पर परिलक्षित होता है। इससे यह ज्ञात होता है कि महाकवि भारवि कालिदास के उत्तरवर्ती तथा माघ के पूर्ववर्ती कवि है। कादम्बरीकार महाकवि बाणभट्ट का समय सातवीं शताब्दी माना जाता है। तथापि बाणभट्ट ने अपने ग्रंथों में भारवि का कहीं नामोल्लेख नहीं किया है। इससे यह प्रतीत होता है कि बाण के समय तक भारवि को ख्याति नहीं प्राप्त हुई थी। हर्षवर्धन के सभाकवि बाणभट्ट ने अपने हर्षचरितम् नामक आख्यायिका में दीपशिखा उपाधिधारी कवि कालिदास का बड़े सम्मानपूर्वक उल्लेख किया है–

निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।

बीजापुर के ऐहोल नामक ग्राम में एक शिलालेख प्राप्त होता है, जिसमें जैन कवि रविकीर्ति ने चालुक्यवंशीय राजा पुलकेशियन द्वितीय की प्रशस्ति लिखी है। रविकीर्ति ने इस शिलालेख में कालिदास और भारवि का उल्लेख किया है–

स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः।

इस शिलालेख का समय 634 ई0 है। अतः भारवि का समय 634 ई0 पूर्व होना चाहिए। बाह्य साक्ष्यों के आधार पर भारवि का समय 600 ई0 के आसपास प्रतीत होता है। वामन और जयादित्य द्वारा 650 में लिखी गई काशिकावृत्ति में किरातार्जुनीयम् का एक पद्य उद्धृत किया गया है। उस समय भारवि कवि रूप में कुछ अवश्य प्रसिद्ध रहे होगें। अतः भारवि का समय 650 ई0 के पूर्व मानना उचित होगा।

चीनी यात्री ह्वेनसाङ्ग हर्षवर्धन के शासनकाल में भारत आया था। सम्राट हर्षवर्धन का समय 606–648 माना जाता है। बाणभट्ट हर्षवर्धन के सभाकवि थे। जैसा कि उपरोक्त कहा गया है कि– महाकवि बाणभट्ट ने अपने ग्रंथों में भारवि के विषय में कहीं वर्णन नहीं किया है। इसलिए भारवि का समय छठीं शताब्दी उत्तरार्द्ध माना जा सकता है।

पाश्चात्य विद्वान् मैक्समूलर ने भारवि का समय 660 ई0 से पूर्व माना है। इस आधार पर भारवि का समय 550 ई0 से 600 ई0 के मध्य माना जा सकता है।

अवन्तिसुन्दरी कथा के अनुसार भारवि दक्षिण भारत के निवासी थे तथा पुलकेशियन द्वितीय के अनुज सिंहविष्णु के राजाश्रित कवि थे। जिसका शासनकाल 615 के समीप माना जाता है। अतः भारवि का समय 600 ई0 के निकट मानना अधिक उचित प्रतीत होता हैं।

महाकाव्य का लक्षण–

जो सर्गों में निबद्ध हो उसे महाकाव्य कहते हैं। इसका नायक देवता अथवा सद्वंश में उत्पन्न कोई क्षत्रिय होना चाहिए जो धीरोदात्त नायक के गुणों से युक्त हो। एकवंश में उत्पन्न अनेक कुलीन राजा भी नायक हो सकता है। शृङ्गार, वीर और शान्त में से कोई एक रस प्रधान तथा अन्य रस गौण रूप में होना चाहिए। यह मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श तथा निर्वाहण नामक पाँच संधियों से युक्त होना चाहिए। इसकी कथावस्तु इतिहास प्रसिद्ध एवं किसी सज्जन से सम्बद्ध हो। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारों पुरुषार्थ में से महाकाव्य के फल प्राप्ति का एक प्रयोजन होना चाहिए। आरम्भ में नमस्कारात्मक, आशीर्वादात्मक, वा वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण होना चाहिए। कहीं–कहीं पर दुर्जन की निन्दा और सज्जन की प्रशंसा होनी चाहिए। एक सर्ग में एक ही छन्द हो तथा सर्ग के अन्त में अन्य छन्द होना चाहिए। महाकाव्य में सर्गों की संख्या अधिकतम आठ होनी चाहिए। तथापि कहीं–कहीं अनेक छन्द वाले सर्ग दिखाई देते हैं। अतः एक सर्ग में अनेक छन्द भी हो सकते हैं। सर्ग के अन्त में भावी कथावस्तु को सूचित करना चाहिए। सन्ध्या, सूर्योदय, चन्द्रोदय, रात्रि, प्रदोष, अन्धकार, दिन, प्रातः, मध्याह्न, मृगया, पर्वत, ऋतु, वन, सागर, संयोग, वियोग, मुनि, स्वर्ग, यज्ञ, युद्ध–प्रस्थान, उपयम, मन्त्र, पुत्रोत्पत्ति आदि का सांगोपाङ्ग वर्णन होना चाहिए। इस काव्य में आचार्यविश्वनाथ के साहित्यदर्पणानुसार काव्य का लक्षण प्रस्तुत किया गया है–

सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायको सुरः।

सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरादात्तगुणान्वितः।।

एकवंशभवा भूपाः कुलजा बहवोऽपि वा।

नायक–किरातार्जुनीयम् महाकाव्य सर्गों में निबद्ध है। इस काव्य के नायक अर्जुन धीरोदात्त है जो प्रसिद्ध क्षत्रियवंश में उत्पन्न हुए है। अर्जुन के अन्तः करण में धीरोदात्त नायक के सम्पूर्ण गुण विद्यमान है। वह महासत्त्वोऽतिगम्भीरः क्षमावानविकत्थनः। स्थिरोनिगूढोऽहङ्कारो धीरोदात्तो दृढव्रतः।। आदि गुणों से युक्त नायक है।

शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गीरस इष्यते ।।

अङ्गानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटकसन्धयः।

रस तथा संधियों का समन्वय–इस महाकाव्य में वीर रस की प्रधानता है। शृङ्गार आदि रस अप्रधान रूप में वर्णित है। यह पांच सन्धियों से युक्त महाकाव्य है इसके प्रथम तीन सर्ग में मुख संधि, चतुर्थ सर्ग से लेकर षष्ठ सर्ग के बीच प्रतिमुख नामक संधि है, सप्तम् से एकादशम सर्ग तक गर्भ संधि है, द्वादशम से षोडश सर्ग तक विमर्शसंधि है, सप्तदशम और अष्टादशम सर्ग में निर्वहण नामक संधि है।

कथानक एवं मंगलाचरण– किरातार्जुनीयम् महाकाव्य की कथावस्तु महाभारत के वनपर्व से लिए जाने के कारण इसका कथानक ऐतिहासिक है। पाशुपतास्त्र को प्राप्त करना इस काव्य का मुख्य प्रयोजन है। किरात के प्रथम सर्ग में वनेचर के द्वारा वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण किया गया है। उसमें दुर्जन की निन्दा तथा सज्जन पुरुष के यश और गुणों की प्रशंसा की गई है।

इतिहासोद्भवम् वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम्।।
चत्वारस्तस्यवर्गाः स्युस्तेष्वेकं च फलं भवेत्।
आदौ नमस्क्रियादिर्वा वस्तुनिर्देष एव वा।।
क्वचित्निन्दा खलादीनां सतां च गुणकीर्तनम्।
एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः।।

सर्गों में विभाजन– किरातार्जुनीयम् अट्ठारह सर्गों वाला महाकाव्य है। इस काव्य का चौथा सर्ग सबसे छोटा है और ग्यारहवां सर्ग सबसे बड़ा है। प्रथम सर्ग में 46 श्लोक, द्वितीय सर्ग 59 श्लोक, तृतीय सर्ग में 60 श्लोक, चतुर्थ सर्ग में 38 श्लोक यह सबसे कम पद्यों वाला सर्ग है। पंचम सर्ग में 52 श्लोक, ग्यारहवें सर्ग में 81 श्लोक, यह सबसे अधिक श्लोकों वाला सर्ग है। इस महाकाव्य में सर्ग न तो बहुत विस्तृत है न ही बहुत अल्प है।

नातिस्वल्पा नातिदीर्घाः सर्गा अष्टाधिका इह।
नानावृत्त्मयः क्वापि सर्गः कष्चन् दृष्यते।।
सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत्।

छन्द विधान– इस महाकाव्य में वंशस्थ छन्द का प्रयोग बहुलता पूर्वक किया गया है। इसके प्रथम सर्ग में 1–44 श्लोक तक वंशस्थ छन्द, 45 श्लोक में पुष्पितागग्र छन्द, 46 श्लोक में मालिनी नामक छन्द का प्रयोग किया गया है तथा पन्द्रहवें और अट्ठरहवें सर्ग में अनेक छन्दों को समाविष्ट किया गया है।

सन्ध्यासूर्येन्दु रजनीप्रदोषध्वान्तवासराः।।
प्रातर्मध्याह्न मृगयाषैलर्तुवनसागराः।
संभोगविप्रलम्भौ च मुनिस्वर्गपुराध्वराः।।
रणप्रयाणोपयम मन्त्रपुत्रोदयादयः।
वर्णनीयं यथायोगं साङ्गोपाङ्गा अमी इह।। (साहित्यदर्पण)

उपरोक्त काव्य के लक्षणानुसार इस काव्य के नवम सर्ग में सध्यावन्दना, रात्रि, चन्द्रोदय और प्रातः आदि का वर्णन किया गया है। चतुर्थ सर्ग से दशम सर्ग तक ऋतुओं का वर्णन, सप्तम सर्ग से दशम तक वनविहार, जलक्रीडा आदि। पञ्चदश सर्ग से अष्टादश सर्ग तक संग्रम का मार्मिक चित्रण किया गया है।

अतः संस्कृत–साहित्य में महाकाव्य को शीर्ष स्थान प्राप्त है। महाकाव्य की परम्परा में काव्य का लक्षण अग्निपुराण, भामहकृत काव्यालङ्कार, दण्डीकृत काव्यादर्श, भोजराज कृत सरस्वतीकण्ठाभरण तथा विश्वनाथ कृत साहित्यदर्पण आदि ग्रंथों में काव्य के स्वरूप का वर्णन किया है। यहाँ साहित्यदर्पण अनुसार काव्य का लक्षण दिया गया है।

कवि की उपाधि–

अर्थगौरव के कारण भारवि अत्यधिक प्रसिद्ध कवि हुए और इसी कारण इन्हें **'आतपत्रभारवि'** की उपाधि से विभूषित किया गया है।

भारवेर्र्थगौरवम्– महाकाव्य के रचनाकारों में कालिदास और अश्वघोष के बाद भारवि का नाम लिया जाता है। भारवि ने अपने काव्य में कालिदास की रचनाओं का बहुत कुछ अनुकरण किया है। जैसे– रघुवंशमहाकाव्य का ''क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः'' श्लोकांश का प्रभाव सुस्पष्ट ''क्व भूपतीनां चरितं क्व जन्तवः'' इस पद्यांश में दिखाई देता है। भारवि की कीर्ति उनके सुप्रसिद्ध महाकाव्य किरातार्जुनीयम् पर अवलम्बित है। उन्होंने अपने काव्य में अर्थगौरव के लिए अल्प शब्दों में विपुल अर्थ संग्रहित होने के कारण ख्याति अर्जित की है। विद्वत्–मण्डली की तरफ से उपमा का प्रयोग करने में कालिदास, अर्थगौरव के लिए भारवि, पदलालित्य के लिए दण्डी और श्रीहर्ष, तथा उक्त तीनों गुणों के लिए माघ प्रसिद्ध है यथा–

उपमा कालिदासस्य भारवेर्र्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः।।

इसके अतिरिक्त भी भारवि के विषय में अनेक प्रशस्तियां कवियों एवं समालोचकों द्वारा दी गई है। सम्प्रति अर्थगौरव के विषय पर ही विचार किया जा रहा है। भारवि ने अपने महाकाव्य में रुचिकर अलङ्कारों का वर्णन करने में बड़ी कुशलता दिखाई है। चतुर्थ सर्ग में जैसे– शरदऋतु का नैसर्गिक और हृदयग्राही वर्णन है, वैसा अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। उपमा, श्लेष, यमक आदि अलङ्कारों का प्रयोग भी उचित मात्रा में किया है तथा उनका चरित्र–चित्रण भी अति प्रभावशाली है। अपमान की ज्वाला में जलती हुई द्रौपदी, अतिशय पराक्रमी भीम, शन्तिमूर्ति युधिष्ठिर, वीर अर्जुन आदि सभी प्रधान पात्रों को बड़ी सजीवता के साथ चित्रित किया गया है। व्यास, गुप्तचर दूत आदि गौण पात्र के रूप में वर्णित है। भारवि की काव्य शैली बड़ी ही मनोहर हैं। उन्होंने शरद ऋतु के दृश्य का बड़ा ही मनमोहक चित्रण किया है– शिरीष के पुष्प के समान कोमल हरे तोते की पंक्ति, मूंगें के टुकडों के समान लाल–लाल चोचों में पीली धान की बालियां लिए हुए आकाश में उड़ रहे हैं। लाल हरे और पीले इन तीन रङ्गों के मिलावट से ऐसे प्रतीत हो रहा है कि मानो आकाश में इन्द्रधनुष उदित हो गया है–

शुकवलिर्व्यक्तशिरीषकोमला धनुः श्रियः गोत्रभिदोऽनुगच्छति।

महाकवि भारवि ने अपने महाकाव्य का कथानक ऐसा चुना है जो राजनैतिक है। उनके काव्य में अर्थगौरव ही यशरूपी पताका है। जहाँ पर कम शब्दों में अधिक अर्थों का संग्रह हो उसे अर्थगौरव कहते हैं। इसके लिए ऐसे पदों का प्रयोग आवश्यक होता है जो अर्थगरिमा से युक्त हो तथा कम शब्दों में

अधिक अर्थों को समाविष्ट करने के लिए अभिव्यञ्जना शैली से युक्त होना चाहिए। अतः उनके काव्य में अर्थगम्भीरता पग–पग पर दृष्टगोचर होती है। प्रथम सर्ग के आरम्भ में वनेचर के कथन द्वारा कवि अपने वाणी की विशेषता को स्वयं उद्घाटित कर दिया है–

स सौष्ठवौदार्यविशेषशालिनीं विनिश्चतार्थामिति वाचमाददे।

अर्थात् निश्चिय ही उनकी वाणी शब्दसौष्ठव और अर्थगम्भीरता से युक्त है।

किरातार्जुनीयम् के प्रारम्भ में तीन सर्ग विशेष करके कठिन है, इसलिए उसे पाषाणत्रय कहा जाता है। अतः मल्लिनाथ ने भारवि के काव्य को नारिकेल फल के समान कहा है। उनका बाह्य रूप रूक्ष तथा कठिन है परन्तु उनके अन्तः करण में काव्य का मधुर रस निहित है–

नारिकेलफलसम्मितं वचो भारवे सपद तद्विभज्यते।
स्वादयन्तुरसगर्भनिर्भरं सारमस्य रसिकायथेप्सितम्।।

इस महाकाव्य में केवल वनेचर के कथन में ही नहीं अपितु सभी पात्रों के कथन में अर्थगौरव भरा पड़ा है। युधिष्ठिर के मुख से दुर्योधन की शासन पद्धति की सराहना सुनकर द्रौपदी की क्रोध रूपी अग्नि प्रज्जवलित होने लगती है और वह युधिष्ठिर की क्रोधरहित शान्तनीति की भर्त्सना (निन्दा) करते हुए कहती है कि– सफल क्रोध वाले व्यक्ति के वश में तो सभी लोग अनायास हो जाते हैं, इसके विपरीत क्रोधरहित व्यक्ति का लोग न तो सम्मान करते हैं और न ही लोग उससे प्रतिकूल होने पर कभी भयभीत होते हैं–

अवन्ध्कोपस्य विहन्तुरापदां भवन्तिवष्याः स्वयमेव देहिनः।
अमर्षषून्येन जनस्य जन्तुना व जातहार्देन न विद्विषादरः।। 1/33।।

द्रौपदी के इस उक्ति में क्रोध को कितना अर्थगम्भीरता के साथ वर्णित किया गया है। इस प्रकार भारवि के काव्य में अर्थगौरव का मूलमन्त्र प्रथम सर्ग से ही प्राप्त होने लगता है। चित्रकाव्य में भारवि अपना बौद्धिक कौशल दिखलाने के लिए पूरे एक सर्ग की रचना कर दी है। जो पन्द्रहवां सर्ग है। इस चित्रकाव्य की शैली में भारवि ने अनेक नमूनों को प्रदर्शित किया है। इन्होंने एक ही अक्षर वाला एक श्लोक लिखा है जिसमें एक मात्र 'न' व्यञ्जनवर्ण का ही प्रयोग किया गया है–

न नोननुन्नो नुन्नोनो नाना नानानना ननु।
नुन्नोनुन्नो ननुन्नेनो नानेना नुन्ननुन्ननुत्।।

अर्थात् नीच मनुष्य द्वारा घायल किया जाने वाला पुरुष, पुरुष कहलाने योग्य नहीं है, जो नीच मनुष्य को घायल करता है। यदि राजा को किसी प्रकार से हांनि न पहुंचे तो वह घायल पुरुष भी वास्तव में अक्षत है। बुरी तरह से घायल मनुष्य को मारने वाला भी अपराधी नहीं है। इस प्रकार एक ही अक्षर में भारवि ने कितना अनूठा विचार भर दिया है। किन्तु साथ ही साथ यह स्वीकार करना होगा कि इस तरह चित्रकाव्य का प्रयोग करने से उनका काव्य कुछ कठिन सा हो गया है। आरम्भ के तीन सर्ग विशेष कठिन है इसीलिए वे तीन सर्ग पाषाणत्रय के नाम से प्रसिद्ध है।

भारवि के काव्य में अर्थगौरव से काव्य वैशिष्ट्य का विधान हुआ है। अतः सहृदय समालोचकों ने ''भारवेरर्थ गौरवम्'' का विधान किया है। भारवि का काव्य अर्थगौरव से ओतप्रोत है। कवि के परिप्रेक्ष्य में

शारदातनय का कथन है कि– ''तादात्म्यं भावरसयोः भारविः स्पष्टमचिवान्'' अर्थात् भारवि की वाणी में भाव और रस का तादात्म्य है।

महाकवि भारवि अलंकृत शैली के प्रर्वतक है। पंडित चन्द्रशेखर ने तो कवि के विषय में यहां तक कह दिया है कि–''महाकाव्यों के इतिहास में भारवि अलंकृत शैली के प्रर्वतक माने जाते हैं। काव्यों को अलंकृत करने वाले प्राकृतिक वर्णनों तथा शब्दिक चमत्कारों से अलंकृत करने वाली पद्धति का सर्वप्रथम दर्शन किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में होता है। इसी अलंकृत शैली का अनुसरण भारवि के परवर्ती कवियों ने किया है।''

भारवि की कविता में एक विचित्र चमत्कार है इसी कारण उनका अर्थगौरव पाठकों के हृदय को अपनी ओर बरबस खींच लेता है। दुर्योधन की आज्ञा–पालन का वर्णन करते हुए वनेचर कहता है कि किसी को दण्डित करने के लिए दुर्योधन को कभी धनुष की डोरी नहीं चढ़ानी पड़ती है और क्रोध से उनका मुख कभी लाल नहीं होता है। तथापि राजागण दुर्योधन के आदेश को नतमस्तक होकर उसी प्रकार स्वीकार करते हैं, जैसे– नतमस्तक होकर माला धारण की जाती है–

गुणानुरागेण शिरोभिरुह्यते नराधिपैर्माल्यमिवास्य शासनम्।।।1/21।।

संवादों की सहायता से कथानक को आगे बढ़ाने में भारवि की एक विशिष्ट कला है। इस महाकाव्य में अधिकांश भाग रोचक संवादों से भरा पड़ा हुआ है। कवि भारवि नीतिशास्त्र, अलङ्कारशास्त्र और व्याकरणशास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् थे। क्षेमेन्द्र ने उनके वंशस्थवृत्त की बड़ी प्रशंसा की है। उनके पूरे काव्य में नीतिविषयक सूक्तियां भरी पड़ी हुई है–

वरं विरोधो अपि समं महात्मभिः।।1/8।।
न वचनीयाः प्रभवो अनुजीविभिः।।1/4।।
हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः।।1/4।
सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।।2/30।।
विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः। 1/37
निराश्रया हन्त हता मनस्विता। 1/43

अर्थात् महान पुरुषों के साथ विरोध करना सतत् उन्नति कराने वाला होता है। सेवकों के द्वारा राजा लोगों को कभी ठगना नहीं चाहिए। इस संसार में हितकर और मनोहर वचन बहुत ही दुर्लभ है। विवक के बिना कोई भी कार्य नहीं करना चाहिए, क्योंकि अविवेक अनेक विपत्तियों का कारण है। मनुष्य के मन की वृत्ति अनेक रूपों वाली होती है। महापुरुषों की स्वाभिमानिता आश्रय से रहित हो गयी है। महाकाव्यों के इतिहास में भारवि अलङ्कारशैली के प्रर्वतक माने जाते हैं।

अतः यह कहा जा सकता है कि इस महाकाव्य में अर्थगौरव की छटा विराजमान है। इस काव्य में अलङ्कारों का चित्रण, प्राकृतिक वर्णनों, तथा शाब्दिक चमत्कारों से विभूषित करने की कला का दर्शन सर्वप्रथम किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में होता है। ये सूक्तियां कम शब्दों में बहुत कुछ कहकर कवि के अर्थगौरव का यशोगान करती हुई स्वयं सहृदयों के गले का हार बन गयी है तथा उनके अलंकृत शैली का अनुसरण परवर्ती कवियों ने बहुलता से किया है।

किरातार्जुनीयम् की कथावस्तु का मूल स्रोत –

काव्य रचना के लिए शास्त्र का ज्ञान होना परमाावश्यक है। जिस प्रकार बिना दीपक को जलाये अन्धकार को दूर नहीं किया जा सकता है, उसी प्रकार शास्त्र ज्ञान के बिना काव्य की रचना करना सम्भव नहीं है। महाकवि भारवि की एक मात्रम कृत किरातार्जुनीयम् है। इसकी कथावस्तु महाभारत के वनपर्व से ली गई है। इस काव्य में 1030 श्लोकों का संग्रह है, जो 18 सर्गों में विभक्त है। इसी वनपर्व के अन्तर्गत अर्जुनाभिगमपर्व नामक सप्तत्रिंषत् अध्याय से लेकर कैरातपर्व नामक एकस्चत्वारिनषत् अध्याय तक कुल 15 अध्यायों में इस कथा का वर्णन है। अर्जुनअभिगमनपर्व में वनवास के समय द्रौपदी का युधिष्ठिर के प्रति क्रोध, युधिष्ठिर और भीम का संवाद, व्यास का आगमन, व्यास के उपदेशानुसार अर्जुन द्वारा पाशुपत अस्त्र प्राप्त करने के लिए, हिमालय पर्वत पर जाकर तपस्या करने हेतु,अर्जुन का प्रस्थान वर्णित है। कैरातपर्व में अर्जुन की तपस्या, किरातवेशधारी भगवानशिव के साथ अर्जुन का युद्ध तथा अर्जुन द्वारा पाशुपतास्त्र प्राप्ति की कथा वर्णित हैं।

किरातार्जुनीयम् की मूल कथावस्तु में परिमार्जन–

महाकवि भारवि ने इस महाकाव्य की मूल कथावस्तु में कुछ परिवर्तन अवश्य किया है, जैसे–युधिष्ठिर के द्वारा गुप्तचर को नियुक्त करना, वनेचर के मुख से दुर्योधन की शासन पद्धति को जानकर द्रौपदी और भीम का क्रोधित होना, यह कवि की अपनी कल्पना मात्र है। महाभारत की कथा में द्रौपदी, भीम और व्यास का संवाद मात्र हैं। इस महाकाव्य में भारवि ने महाभारत के अनुसार स्वयं संवादों की योजना की है। महर्षि वेदव्यास अर्जुन को वेद–स्मृति शास्त्र की विद्या प्रदान करते हैं। उसके उपरान्त अर्जुन यक्ष की सहायता से इन्द्रकील पर्वत पर जाता है। किरातार्जुनीयम् में हिमालय पर्वत, इन्द्रकील पर्वत, गन्धमादन पर्वत और अर्जुन की तपस्या कवि की स्वकल्पना है। अर्जुन की तपस्या को भङ्ग करने के लिए इन्द्र द्वारा भेजी गई अप्साराएं कवि के प्रतिभा की कल्पना का विलास है। इस प्रकार कवि भारवि ने महाभारत की मूलकथा में परिवर्तन करके काव्य को सुशोभित किया है।

किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के सरांष का संक्षिप्त परिचय–

इस महाकाव्य के कथावस्तु का संक्षिप्त परिचय कुछ इस प्रकार है–

प्रथम सर्ग–इस सर्ग का शुभारम्भ द्यूतक्रीडा में पराजित द्वैतवन में निवास करने वाले पाण्डवों से प्रारम्भ होता है। द्वैतवासी युधिष्ठिर दुर्योधन की शासन–पद्धति का सम्पूर्ण वृत्तान्त जानने के लिए किरातवेशधारी वनेचर को नियुक्त किया हैं। वनेचर हस्तिनापुर जाकर दुर्योधन के शासन–पद्धति को अच्छी तरह जानकर पुनः द्वैतवन में युधिष्ठिर के समीप आकर दुर्योधन की कूटनीति का सम्पूर्ण समाचार बताता है। यह वृत्तान्त जानकर युधिष्ठिर द्रौपदी के राजमहल में जाते हैं तथा भाईयों के सम्मुख वनेचर के कथन को यथावत् सुनाते हैं। यह सुनकर द्रौपदी के अन्तः करण की ज्वाला प्रदीप्त हो जाती है और युधिष्ठिर के शन्ति नीति की निन्दा करते हुए दुर्योधन के साथ युद्ध करने के लिए युधिष्ठिर को उत्साहित करती है।

द्वितीय सर्ग– द्वितीय सर्ग में भीम–द्रौपदी सहित युधिष्ठिर को युद्ध करने के लिए कहते हैं। परन्तु युधिष्ठिर युद्ध करने के लिए उनकी बातों का समर्थन करते हैं तथा उचित समय आने के लिए प्रतीक्षा करने के लिए कहते हैं। युधिष्ठिर भीम और द्रौपदी को नीतिपूर्वक समझाते हुए कहते हैं कि जब पाण्डवों

के मित्र उसकी सहिष्णुता की प्रशंसा करे और दुर्योधन के दुर्व्यवहार से अपमानित होकर राजा लोग उससे अलग हो जाए। उसी समय भगवान् वेदव्यास वहाँ उपस्थ्ति होते हैं।

तृतीय सर्ग– इस सर्ग के आरम्भ में युधिष्ठिर–व्यास का संवाद वर्णित है। वेदव्यास अर्जुन को पाशुपतास्त्र प्राप्त हेतु हिमालय पर्वत पर जाकर तपस्या करने के लिए कहते हैं। महर्षि वेदव्यास के कथनानुसार अर्जुन हिमालयपर्वत पर तपस्या करने के लिए प्रस्थान करते हैं।

चतुर्थ सर्ग– चतुर्थ सर्ग में यक्ष अर्जुन के मार्ग का प्रदर्शन करता है। हिमालयपर्वत पर तपस्या के लिए जाते समय पर्वत, वन, शरद्ऋतु तथा गोपालों का बड़ा रमणीय वर्णन किया गया है।

पञ्चम सर्ग– इस सर्ग में यक्ष हिमालय की विशेषता बताकर और अर्जुन को तपस्या में लगाकर स्वयं चला जाता है। इसी सर्ग में हिमालय की सुन्दरता का भी वर्णन किया गया है।

षष्ठ सर्ग– अर्जुन की तपस्या भङ्ग करने के लिए इन्द्र अपनी अप्सराओं को हिमालयपर्वत पर जाने के लिए भेजते हैं। सभी अप्सराएं हिमालय की ओर प्रस्थान करती है जिसका वर्णन कवि ने छठवें सर्ग में किया है।

सप्तम सर्ग– इस सर्ग में अप्सराओं की यात्रा तथा हिमालयपर्वत पर पहुँचने का वर्णन किया गया है।

अष्टम सर्ग– अष्टम सर्ग में गन्धर्वों के साथ अप्सराओं का वन विहार, गङ्गास्नान और उनकी जलक्रीडा का सरल एवं विस्तृत वर्णन किया गया है।

नवम सर्ग– इस सर्ग में संध्याकाल, प्रातः काल, चन्द्रोदय आदि का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया गया है।

दशम सर्ग– दशम सर्ग में अर्जुन की तपस्या भङ्ग करने के लिए अप्सराएं नृत्य, गीत वाद्ययन्त्र, हाव–भाव रूप–सौन्दर्य आदि। इन विविध प्रयत्नों के द्वारा वे अप्सराएं अर्जुन को तपस्या से विहीन करने में असफल रही। अन्ततः निराश होकर सभी अप्सराएं वापस चली गई।

एकादशम सर्ग– इस सर्ग में अर्जुन मुनिवेश में इन्द्र से वार्ता करते हैं। इन्द्र अर्जुन की कठोर तपस्या देखकर प्रसन्न हो जाते हैं और भगवान् शिव की तपस्या करने के लिए अर्जुन को उपदेश देते हैं।

द्वादषम सर्ग– इस सर्ग में इन्द्र के उपदेशानुसार अर्जुन पुनः तपस्या में लीन हो जाते हैं। अर्जुन की कठोर तपस्या को देखकर मुनिगण शिव के पास जाकर प्रार्थना करते हैं तब भगवान् शिव मुनिगण को तपस्या का रहस्य बताते हैं कि– इन्द्र की तपस्या को भङ्ग करने के लिए मूकदानव छलपूर्वक वराह का रूप धारण करके जाएंगा। उसी समय अर्जुन की रक्षा के लिए किरात् का मायावी वेशधारण करके मैं वहां उपस्थित होकर उसकी रक्षा करूंगा।

त्रयोदश एवं चतुर्दश सर्ग– इस सर्ग में अर्जुन सूकर को अपनी ओर आते हुए देखकर किरात् और अर्जुन दोनों सूकर पर एक साथ बाण छोड़ते हैं। अर्जुन का बाण सूकर को मारकर पृथिवी में घुस जाता है और बचे हुए बाण के लिए किरात्–अर्जुन के मध्य विवाद चलता हैं।

पञ्चदशम सर्ग– इस सर्ग में किरातवेशधारी शिव तथा अर्जुन के मध्य युद्ध का वर्णन किया गया हैं।

षोडश सर्ग– इस सर्ग में अर्जुन अपने सभी अस्त्रों को निष्फल देखकर किरात् शिव के साथ बाहु–युद्ध करने की इच्छा प्रकट करते हैं।

सप्तदश सर्ग– कवि ने इस सर्ग में अर्जुन और शिव के मध्य महासंग्रम का वर्णन किया है।

अष्टादशम सर्ग– यह अन्तिम सर्ग हैं। बाहुयुद्ध में लीन अर्जुन भगवान् शिव के चरणों को पकड़ लेते हैं उसी समय शिव अत्यन्त प्रसन्न होकर प्रकट होते हैं और अर्जुन को अपने गले लगाते हैं। अन्ततः उन्हें दिव्यास्त्र या पाशुपत अस्त्र दे करके विजयश्री का आर्शीवाद प्रदान करते हैं। काव्य में कथा का सार इस प्रकार उपलब्ध होता है।

महाकाव्यों का वर्गीकरण–संस्कृत साहित्य में काव्य की परम्परा को ध्यान में रखते हुए उत्कृष्ट महाकाव्यों को दो भागों में विभाजित किया गया है–

1. बृहत्त्रयी महाकाव्य 2. लघुत्रयी महाकाव्य।

बृहत्त्रयी महाकाव्य–

महाकवि भारवि कृत– किरातार्जुनीयम्।
महाकवि माघ कृत – शिशुपालवधम्।
महाकवि श्रीहर्ष कृत – नैषधीयचरितम्।

उपर्युक्त तीनों महाकाव्यों की गणना बृहत्त्रयी के अन्तर्गत की जाती है। माघ कृत शिशुपालवधम् 20 सर्गों तथा 1650 श्लोकों वाला महाकाव्य हैं। इस काव्य में वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण किया गया है। वीर रस प्रधान महाकाव्य है। श्रीहर्ष कृत नैषधीयचरितम् में 2830 श्लोकों का संग्रह है जिसे 22 सर्गों में विभाजित किया गया है। इस काव्य में नल–दमयन्ती की कथा वर्णित है। यह शृङ्गार रस प्रधान तथा वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण किया गया है। नैषध महाकाव्य में प्रत्येक सर्ग के अन्त में ''आनन्द'' शब्द का प्रयोग किया गया है इसलिए इसे ''आनन्दमहाकाव्य'' भी कहा जाता है। किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में 1030 श्लोकों को 18 सर्गों में विभक्त किया गया है। इस काव्य में भी वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण किया गया है तथा वीर रस प्रधान काव्य हैं। अतः तीनों महाकाव्यों में वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण किया गया हैं जिसका लक्षण इस प्रकार है–

आशीर्नमस्क्रिया वस्तुनिर्देशो वापि तन्मुखम्।

बृहत्त्रयी कवियों की पदवीं– इन महाकवियों को उपाधि से भी विभूषित किया गया है। महाकवि भारवि को ''भारवेर्रथगौरवम् और आतपत्रभारवि'' की उपाधि दी गई है। 'घण्टामाघ' की उपाधि से महाकवि माघ को विभूषित किया गया है।

लघुत्रयी महाकाव्य– लघुत्रयी महाकाव्य के अन्तर्गत केवल कालिदास की रचनाएं समाविष्ट है।

अनावृत्तं कपाटं द्वारं देहि। (कालिदास उक्ति)

कालिदास के इस कथन को सुनकर पत्नी विद्योतमा कहती है कि–

अस्ति कश्चिद् वाक् विषेषः। (विद्योतमा उक्ति)

विद्योतमा के इस कथन को सुनकर महाकवि कालिदास ने दो महाकाव्य और एक गीतिकाव्य की रचना की है–

1. **कुमारसम्भवम् महाकव्यम्।**
2. **रघुवंषमहाकाव्यम्।**
3. **मेघदूतं गीतिकाव्यम् या खण्डकाव्यम्।**

अस्ति– 'अस्ति' शब्द से महाकवि कालिदास ने 17 सर्गों वाला कुमारसम्भवम् नामक महाकाव्य की रचना की है। यहाँ पर कुमार शब्द कार्तिकेय का विशेषण है। इस काव्य का प्रथम श्लोक '**अस्ति'** शब्द से ही प्रारम्भ हुआ है, यथा–

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नामनगधिराज।

पूर्वापरौतोयनिधिं वगाह्य स्थितपृथिव्यामिव मानदण्डः।।

कश्चिद्–'कश्चित्' शब्द से कालिदास ने मेघदूत नामक गीतिकाव्य की रचना की है। जो 'पूर्वमेघ' और 'उत्तरमेघ' नामक दो भागों में विभक्त है। सम्पूर्ण काव्य में मन्दाक्रान्ता छन्द है तथा वस्तुनिर्देशात्मक मङ्गलाचरण किया गया है। इस काव्य का आरम्भ कश्चित् शब्द से किया गया है यथा–

कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्तः।

वाग्–'वाग्' शब्द से कलिदास ने 19 सर्गों वाला रघुवंशमहाकाव्य की रचना है। यह काव्य शृङ्गार रस प्रधान है तथा नमस्कारात्मक मंगलाचरण किया गया है। 'वाग्' शब्द से इस महाकाव्य का श्रीगणेश हुआ है, यथा–

वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।

जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।

अतः कालिदास के तीनों लघुकाव्य संस्कृत साहित्य में प्रशंसनीय है।

द्वैतवन– शतपथ ब्राह्मण 13-5-4-9 में ऐसा उल्लेख मिलता है कि द्वैतवन के नाम पर मत्स्यदेश के राजा का नाम द्वैतसर रखा गया था। वामनपुराण में इस वन को सन्निहत्य कुण्ड के पास बताया गया है। यह जानकारी पी0 वी0 काणे के धर्मशास्त्र के अनुसार प्राप्त होती है।

पात्रों का चरित्र–चित्रण–

इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग में पात्रों के चरित्र का संक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है–

वनेचर का चरित्र–चित्रण– वनेचर में ''चरेष्टा'' सूत्र के अनुसार 'ट' प्रत्यय है। यह वनेचर वन में विचरण करके जीविका चलाने वाला एक वनवासी पुरुष है। इस महाकाव्य का शुभारम्भ वनेचर के कथन से आरम्भ होता है। द्यूतक्रीडा में दुर्योधन से पराजित होकर राजा युधिष्ठिर भाईयों सहित द्वैतवन को चले

जाते हैं। महाराजा युधिष्ठिर दुर्योधन की शासन पद्धति जानने के लिए ब्रह्मचारी का वेश धारण करने वाला गुप्तवनेचर को नियुक्त करके हस्तिनापुर भेजते हैं। यह नगर भरत के प्रपौत्र हस्तिन् द्वारा बसाया गया था। इसी कारण इसे हस्तिनापुर कहा जाता है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् में राजा दुष्यन्त की राजधानी हस्तिनापुर के नाम से वर्णित है। वनेचर के अन्तःकरण में गुप्तचर के सभी गुण विद्यमान है। मनुस्मृति में आचार्य मनु ने गुप्तचर के आठ गुणों का वर्णन किया है। मनु ने ही दूत को सन्धि विग्रह का कारण माना है। वह स्पष्टवक्ता, सत्यनिष्ठ, निर्भीक, कर्त्तव्यपरायण, दृढ, पटु एवं प्रथम कोटि का स्वामिभक्त राजसेवक है। राजा के राज्य को अच्छी तरह से संचालन करने में वनेचर की मुख्य भूमिका रहती है।

दुर्योधन का चरित्र–चित्रण–

वनेचर के कथनानुसार दुर्योधन के चरित्र पर कुछ प्रकाश डाला गया है। एक नीतिकुशल राजा के रूप में इसका वर्णन किया गया है। दुर्योधन स्वगुणों के द्वारा निर्मलयश तथा नीति के माध्यम से अपने पौरुष का विस्तार करना चाहता है। वह अपने व्यवहारिक गुणों के कारण सेवकों, मित्रों तथा बन्धुओं के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करता है। वह त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) का समान रूप से सेवन करता है। दुर्योधन गुणों का अच्छा ज्ञाता है तथा गुणों के आधार पर सभी का सम्मान करता था। वह पक्षपात रहित होकर अपराधी को समान रूप से दण्ड देता है, चाहे पुत्र हो या शत्रु। दुर्योधन एक प्रजापालक स्वामी है, उसने प्रजाओं की रक्षा के लिए अनेक हितकारी कार्यों को सम्पन्न किया था। यथा– प्रजा सिंचाई करके अधिक अनाज पैदा कर सके, उसके लिए राजा दुर्योधन ने कूप, जलाशय आदि का निर्माण करवाया था।

राजनीति मर्मज्ञ–राजा दुर्योधन राजनीति करना बहुत अच्छी तरह जानते थे। उसने काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य को जीतकर अपने वश में कर लिया था तथा साम, दान, दण्ड, भेद इन चार नीतियों का प्रयोग बड़ी सरलता से करता था। वह धन–दौलत और रुपया–पैसा के लोभ में किसी प्रजा को दण्ड नहीं देता था।

अन्य राजाओं के प्रति उदारता– जो राजा दुर्योधन के अधीन रहता था। वह उसके प्रति उदारता का व्यवहार करता था। सुयोधन की उदारता के कारण सभी सामन्त राजा उसकी आज्ञा का पालन करते थे। उसके अन्दर और रोम–रोम में उदारता का गुण भरा हुआ था। जिसके कारण सेवकों के प्रति अभिमान से रहित होकर सगे सम्बन्धियों जैसा व्यवहार करता था।

किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग में वनेचर के कथनानुसार राजा दुर्योधन प्रजा हितैषी, कुशल प्रशासक, राजनीति मर्मज्ञ, प्रजावात्सल्य, सामन्त राजाओं के प्रति विनम्रता, सेवकों के प्रति कुशल व्यवहार, आर्थिक समृद्ध को बढ़ाने वाला तथा प्रजारक्षक सम्राट था।

नायिका द्रौपदी का चरित्र–चित्रण–

द्रौपदी एक क्षमाशील नारी थी। पौराणिक कथा के अनुसार इसकी क्षमाशीलता का वर्णन इस प्रकार किया गया है– एक बार अर्जुन के इन्द्रप्रस्थ से दिव्यास्त्र की शिक्षा पाकर लौटने के बाद पांचों पाण्डव द्रौपदी के साथ काम्यवन में अपना आश्रम बना कर निवास कर रहें थे। एक बार किसी कार्यवश पांचों पाण्डव बाहर चले गये। आश्रम में केवल द्रौपदी, दासी और उनके पुरोहित धौम्य थे। एक दिन दुर्योधन की बहन दुःशाला का पति जयद्रथ विवाह की इच्छा से शाल्वदेश जा रहा था। अचानक आश्रम के द्वार

पर खड़ी उसकी दृष्टि द्रौपदी पर पड़ी तथा उस पर मुग्ध हो गया। उसने अपनी सेना को वही रोक कर अपने मित्र कोटिकास्य से उस नारी के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए कहा। जब उसे यह पता चला की वह पांचों पाण्डवों की पत्नी द्रौपदी है, तो उसने स्वयं जाकर द्रौपदी से कहा कि वन में विचरण करने वाले पाचों पाण्डवों को त्याग कर आप मेरी अर्धांग्नी बन जाओ। जयद्रथ के इस वचन को सुनकर द्रौपदी ने उसे बहुत धिक्कारा, परन्तु दुराचारी जयद्रथ पर उसकी बातों का कोई असर नहीं पड़ा। उसने द्रौपदी को शक्तिपूर्वक खींचकर अपने रथ में बैठा लिया। जब गुरु धौम्य उसकी रक्षा के लिए आये तो जयद्रथ ने उन्हें भूमि पर धक्के देकर गिरा दिया और वहां से अपना रथ खींचकर अन्यत्र ले जाने लगा। कुछ समय पश्चात् पाण्डव आश्रम में पहुचें। द्रौपदी के अपहरण की सूचना पाते ही भीम गदा लेकर जयद्रथ का पीछा कर लिया। युधिष्ठिर ने भीम को बताया कि वह बहन दुःशाला का पति है। अतः उसे जान से मत मारना। उसी समय अर्जुन ने भी उसका पीछा किया था और अर्जुन के भय से जयद्रथ द्रौपदी को छोड़कर भाग गया। फिर भी भीम ने पीछा करते हुए जयद्रथ को पकड़ लिया तथा उसे लेकर द्रौपदी के सामने आये और भीम ने उसे इच्छानुकूल सजा देने के लिए कहा। द्रौपदी ने उसे सजा देने के बजाय उसे क्षमा कर दिया तथा उसके हाथों में पड़े हुए बन्धन को खोलकर सदा के लिए उसे मुक्त कर दिया।

युधिष्ठिर का चरित्र–चित्रण–

किरातार्जुनीयम् में महाकवि भारवि ने पञ्च पाण्डवों में ज्येष्ठ भ्राता महाराज युधिष्ठिर के चरित्र का विशेष रूप से वर्णन किया है। इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग में रचनाकार महाकवि भारवि ने युधिष्ठिर के मुख से कोई कथन प्रत्यक्ष रूप में अभिव्यक्त नहीं कराया है। फिर भी वनेचर और द्रौपदी के वाक्य में युधिष्ठिर का चरित्र अत्यन्त सहज और सरल रूप में वर्णित है–

विनम्रता तथा सत्यप्रियता– युधिष्ठिर के अन्तः करण में विनम्रता और सत्यप्रियता अत्यधिक कूट–कूट कर भरी हुई थी। ये समय और परिस्थिति के अनुसार कार्य करते थे, सत्य के पालनकर्ता थे। सत्यधर्म की रक्षा करने के लिए इन्होंने जंगल में अपना कठिन समय व्यतीत किया। ये सदा सत्य बोलते थे। युधिष्ठिर की सत्यप्रियता और विनम्रता समाज के लिए शिक्षाप्रद है। युधिष्ठिर की विनम्रता को देखकर दुर्योधन स्वयं अपनी विनयशीलता का यश बढ़ाना चाहता है। इसीलिए वनेचर कहता है कि–क्रोध के समय वह अपने मुख को कभी कुटिल नहीं करता है–

कृतं न वा कोपविजिह्ममाननम्।

षास्त्रों का ज्ञाता– राजा युधिष्ठिर को वेदशास्त्रों का पूरा ज्ञान था। जब महर्षि वेदव्यास उनके राजभवन में आते हैं, तब वे अपने राजसिंहासन से शीघ्र उठकर वैदिक विधि से उनकी पूजा–अर्चना करते हैं तथा महर्षि की आज्ञा से अपना आसन ग्रहण करते हैं। अतिथि के आगमन पर उनका हृदय हर्ष से भर जाता है।

अद्भुत धैर्य– युधिष्ठिर स्वभाव से गम्भीर और धैर्यशाली राजा थे। जब उनका दूत वनेचर दुर्योधन के राज्य समृद्धि का समाचार सुनाता है, तो भी उनका धैर्य अटल बना रहता है। परन्तु रानी द्रौपदी वनेचर के कथन को सुनकर, युधिष्टिर को उलाहना देते हुए कहती है कि हे राजन् ! आप राजचिन्हों को त्याग

दीजिए और मुनियों के समान जटाधारण करके तपस्वी का जीवन व्यतीत कीजिए। द्रौपदी के इस कथन को सुनकर युधिष्ठिर का धैर्य किसी प्रकार से प्रभावित नहीं हुआ—

व्रजन्ति षत्रुनवधूय निःस्पृहाः षमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः।

षान्ति स्वभाव— महाराज युधिष्ठिर बहुत शान्ति स्वभाव के राजा थे। इसी स्वभाव के कारण वे द्रौपदी और अपने छोटे भाईयों को उचित समय की प्रतीक्षा करने के लिए कहते हैं।

इस प्रकार महाराज युधिष्ठिर के अन्दर अथाह धैर्य, राजनीति कुशलता, धार्मिक निष्ठा, सत्यभाषण, अस्त्र—शस्त्र में निपुण, विनयशील इत्यादि गुणों से युक्त था। इसीलिए दुर्योधन युधिष्ठिर के गुणों का अनुसरण करना चाहता था। पाण्डु तथा कुन्ती के पुत्र युधिष्ठिर अस्त्र—शस्त्र विद्या में पारंगत थे। ये भाला चलाने में निपुण थे।

किरातार्जुनीयम् पर लिखी गई टीकाएं—

किरातार्जुनीयम् के प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ है। इस महाकाव्य पर कम से कम सप्तत्रिंशत (सैतीस) टीकाएं लिखी जा चुकी है। जिसमें मल्लिनाथ के द्वारा लिखी गई टीका घण्टापथ माघ सर्वश्रेष्ठ टीका है। सन् 1912 में कार्ल कैप्पलर हारवर्ड ने ओरिएण्टल सीरीज के अन्तर्गत किरातार्जुनीयम् नामक काव्य को जर्मन भाषा में अनुवाद किया। इसके छः से भी अधिक भाग अंग्रेजी में अनुवाद हो चुके हैं।

एक दृष्टि में महाकवि भारवि तथा किरातार्जुनीयम् का मुख्य परिचय—

1.	भारवि के बचपन का नाम	दामोदर
2.	माता का नाम	सुशीला
3.	पिता का नाम	श्रीधर
4.	पत्नी का नाम	रसिका
5.	जन्म स्थल	अचलपुर या एलिचपुर
6.	उपाधि	आत्रपत्र भारवि
7.	गोत्र का नाम	कौशिक गोत्र
8.	समय	षष्ठम शताब्दी उत्तरार्द्ध
9.	ग्रंथ का नाम	किरातार्जुनीयम्
10.	किरातार्जुनीयम् के लेखक	महाकवि भारवि
11.	किरातार्जुनीयम् की विधा	महाकाव्य है।
12.	मुख्य कथानक	महाभारत के वनपर्व
13.	कुल सर्गों की संख्या	18 सर्ग
14.	प्रथम सर्ग में श्लोकों की संख्या	46 श्लोक है।
15.	किरातार्जुनीयम् में कुल श्लोकों की संख्या	1030 है।
16.	प्रमुख रस	वीररस
17.	नायक—नायिका	अर्जुन—द्रौपदी
18.	प्रमुख छन्द	वंशस्थ और मालिनी छन्द
19.	गुण	ओज गुण
20.	प्रमुख पात्र	युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, कृष्ण, इन्द्र, शिव,

		वनेचर, दुर्योधन, यक्ष, व्यासमुनि, द्रौपदी।

इस प्रकार भूमिका का लेखनकार्य पूरा करने के उपरान्त श्लोकों की संदर्भ सहित व्याख्या प्रारम्भ की जा रही है।

ओ३म् श्री गणेशाय नमः
महाकविभारविविरचित्
किरातार्जुनीयम्
प्रथम सर्ग

श्रियः कुरूणामधिपस्य पालनीं
प्रजासु वृत्तिं यमयुङ्क्त वेदितुम् ।
स वर्णिलिङ्गी विदितः समाययौ
युधिष्ठिरं द्वैतवने वनेचरः।।1।।

अन्वय का लक्षण–बिखरे हुए शब्दों को क्रमबद्ध करना ही अन्वय कहलाता है।

अन्वय–कुरूणाम् अधिपस्य श्रियः पालनीं प्रजासु वृत्तिम् वेदितुम यम् वर्णिलिङ्गी सः वनेचरः अयुङ्क्त विदितः द्वैतवनेः युधिष्ठिरम् समाययौ।

शब्दार्थ– कुरूणामधिपस्य– कुरुदेश के राजा दुर्योधन की। **श्रियः–** राजलक्ष्मी का। **पालनीम्–** पालन करने वाली। **प्रजासुवृत्तिं–** प्रजाओं में व्यवहार को। **वेदितुम्–** जानने के लिए। **यम्–** जिस (युधिष्ठिर ने) **वर्णिलिङ्गी–** ब्रह्मचारी के वेश वाला। **सः वनेचरः**–वह वनेचर (वन में निवास करने वाला किरात अर्थात् शिव) **अयुङ्क्त–** नियुक्त किया गया था। **विदितः–** जानकर (अर्थात् दुर्योधन की शासन पद्धति को जानकर) **द्वैतवने–** द्वैतवन में निवास करने वाले। **युधिष्ठिरम्–** युधिष्ठिर के पास। **समाययौ–** लौट आया।

संदर्भ– प्रस्तुत श्लोक आत्रपत्र उपाधिधारी, महाकवि भारवि द्वारा लिखे गये किरातार्जुनीयं महाकाव्य के प्रथम सर्ग से उद्धृत किया गया है।

नोट– इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग में यही सन्दर्भ यथावत् लिखा जाएगा।

प्रकरण– प्रस्तुत पद्य में महाराज युधिष्ठिर ने दुर्योधन की शासन पद्धति को जानने के लिए

हिन्दी–अनुवाद– कुरु नामक देश के राजा दुर्योधन की राजलक्ष्मी का प्रजाओं में पालन करने वाले व्यवहार को जानने के लिए युधिष्ठिर ने ब्रह्मचारी का वेश धारण करने वाले जिस वनवासी को नियुक्त किया था। वह वनवासी (वनेचर) दुर्योधन के सम्पूर्ण शासन पद्धति या व्यवहार को जानकर युधिष्ठिर के समीप लौट आया।

संस्कृत अनुवाद– यदा युधिष्ठिरः पाण्डवैः सार्धं द्वैतवने निवसन् आसीत्। तदा दुर्योधनस्य प्रजा विषयकव्यवहारं परिज्ञातुं यं वनेचरं नियुक्तवान् सः किरातः सम्पूर्ण वृत्तान्तं ज्ञात्वा द्वैतवने युधिष्ठिरस्य समीपे आगतः।

मङ्गलाचरण– वस्तुनिर्देशात्मक।

समास– समासः पञ्चधा। तत्र समसनं समासः।

समास पांच प्रकार के होते हैं। समसनं– संक्षेप को ही समास कहते हैं। समास का शाब्दिकार्थ है– संक्षेप, **स्वरूप–** अनेक पदों का एक पद बन जाना ही संक्षेप या समास कहलाता है।

द्वैतवन–कर्मधारय समास, **वनेचरः–** वने चरः इति वनेचरः में (उपपद कर्मधारय समास)

व्याकरण– श्रियः– पञ्चमी और षष्ठी विभक्त एकवचन, **करूणाम्–** षष्ठी विभक्त बहुवचन का रूप है।

प्रजासु– सप्तमी विभक्त बहुवचन का रूप, **अधिपस्य–** षष्ठी विभक्त एकवचन का रूप है।

करूणाम्– देशवाची शब्द का प्रयोग सदैव बहुवचन में किया जाता है।

कुरूणाम्– कुरु+अण् (जनपदशब्दात् सूत्र) से अण् प्रत्यय हुआ है, (जनपदे लुप् सूत्र) से अण् प्रत्यय के 'ण्' का लोप हो जाता है। केवल 'अ' ही शेष बचता है। **अधिपस्य–**'अधि' उपसर्गपूर्वक पा+क प्रत्यय।

वृत्तिम्– वृत्+क्तिन् प्रत्यय लगाकर (द्वितीया विभक्त एकवचन) का रूप बना है। **वेदितुम–** विद् धातु में तुमुन् प्रत्यय। वनेचरः– अधिकरण में उपपद होने पर (चरेष्टः सूत्र से)' चर' धातु में 'ट' प्रत्यय हो जाता है। **विदितः–** विद् धातु में 'क्त' प्रत्यय है।

छन्द– यदक्षरपरिमाणंतच्छन्दः।

अर्थात् जिसमें अक्षरों की संख्या निश्चित होती है उसे छन्द कहते हैं। (कात्यायन–सर्वानुक्रमणी)

किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग में श्लोक संख्या 1 से लेकर 44 वें श्लोक तक वंशस्थ छन्द का प्रयोग किया गया है।

वंशस्थ छन्द का स्वरुप– वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ। (छन्दोमंजरी)

अर्थात्– यह समवृत्ति नामक वर्णिक छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं तथा प्रत्येक चरण में बारह वर्ण होते हैं। जिस छन्द के चारों चरणों में जगण, तगण, जगण और रगण क्रमशः आये तो वहाँ पर वंशस्थ नामक छन्द होता है।

प्रधान रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

राजेशेखर के मत में पाञ्चाली रीति का भव्य निदर्शन किया गया है–

शब्दार्थयोः समोगुम्फः पाञ्चाली रीतिरिष्यते।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– छेकानुप्रास अलङ्कार।

लक्षण–सोऽनेकस्य सकृत्पूर्वः।

अर्थात् जहाँ पर अनेक व्यञ्जन वर्णों की एक बार समानता हो वहाँ पर छेकानुप्रास अलंकार होता है।

टिप्पणी– किरातार्जुनीयम् महाकाव्य की कथावस्तु महाभारत के वनपर्व से ली गयी है। द्यूतक्रीडा में पराजित होने के कारण पाण्डवों को बारह वर्ष का वनवास और एक वर्ष के लिए अज्ञात जीवन व्यतीत करना पड़ा। जब द्वैतवन में पाण्डव (युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम, नकुल और सहदेव) लोग निवास कर रहे थे उसी समय युधिष्ठिर ने दुर्योधन के प्रजागत व्यवहार को जानने के लिए ब्रह्मचारी वनेचर को हस्तिनापुर भेजा। वह हस्तिनापुर जाकर दुर्योधन के शासन पद्धति को अच्छी तरह जानकर वही वनेचर ब्रह्मचारी के वेश में युधिष्ठिर के समीप द्वैतवन में लौट आया तथा दुर्योधन के सम्पूर्ण वृत्तान्त को यथादृष्ट युधिष्ठिर से कहता है। यही से इस बृहद्त्रयी महाकाव्य की कथा प्रारम्भ होती है।

इस महाकाव्य के प्रारम्भ में **'श्री'** शब्द और अन्त में **'लक्ष्मी'** शब्द का प्रयोग किया गया है।

प्रकरण– इस श्लोक में युधिष्ठिर से दुर्योधन के व्यवहार को कहने के लिए वनेचर अपने कथन की भूमिका बना रहा है कि सर्वप्रथम राजा युधिष्ठिर को प्रणाम करके सम्पूर्ण वृत्तान्त कहूँगा–

कृतप्रमाणस्य महीं महीभुजे
जितां सपत्नेन निवेदयिष्यतः ।
न विव्यथे तस्य मनो न हि प्रियं,
प्रवक्तुमिच्छति मृषा हितैषिणः ।।2।।

अन्वय– कृतप्रणामस्य सपत्नेन जिताम् महीम् महीभुजे निवेदयिष्यतः तस्य मनः न विव्यथे हि हितैषिणः मृषा प्रियम प्रवक्तुम् न इच्छन्ति।

शब्दार्थ– कृतप्रणामस्य– प्रणाम कर लिया है जिसने अर्थात् वनेचर ने। **सपत्नेन**– शत्रु द्वारा। **जिताम्–** जीती गयी। **महीम्–** पृथिवी को। **महीभुजे–** पृथिवी के स्वामी राजा युधिष्ठिर के लिए। **निवेदयिष्यतः**– निवेदन करने वाला। **तस्य मनः**– उस वनेचर का मन। **न विव्यथे–** तनिक व्यथित नहीं हुआ। **हि–** क्योंकि। **हितैषिणः–** हित चाहने वाले लोग (अपने राजा का)। **मृषा–** असत्य या झूठ। **प्रियम् प्रवक्तुम्**–प्रिय वचन को कहना। **न**–नहीं। **इच्छन्ति–** चाहते हैं।

अनुवाद– प्रणाम कर लिया है जिस वनेचर ने शत्रु के द्वारा जीती गई पृथिवी को महाराजा युधिष्ठिर के लिए निवेदन करने वाला उस वनेचर का मन थोडा भी दुखित नहीं होता है। क्योंकि अपने राजा का हित चाहने वाले सेवक लोग झूठ युक्त प्रिय वचन बोलना नहीं चाहते हैं।

संस्कृत अनुवाद– महाराजयुधिष्ठिरं नमोकृत्वा तस्य विनयशीलस्वामीहितैषिणः किरातस्य शत्रुणा विजित्य पृथिव्याः समाचारं दुर्योधनसम्पदा विषयकंऽप्रियमपि वचनं कथयिष्यतः मनः नहि पीडितं बभूव। हितसाधकाः सेवकाः कदाचितपि असत्यं प्रियवचनं कथयितुम न इच्छन्ति।

समास– कृतप्रणामस्य– कृतः प्रणामः येन स, बहुब्रीहि समास। **महीभुजे–** उपपद तत्पुरुष समास **प्रियप्रवक्तुम्–** प्रिय च असौ प्रवक्तुम्, कर्मधारय समास।

व्याकरण– कृतप्रणामस्य– कृ धातु क्त प्रत्यय=कृत, प्र उपसर्गपूर्वक 'नम्' धातु में घञ् प्रत्यय=प्रणाम **अस्य**–पञ्चमी–षष्ठी विभक्ति एकवचन का रूप है। **सपत्नेन–** तृतीया विभक्ति एकवचन। **जिताम्–** 'जि' धातु क्त +टाप् +ताम्= जिताम्, द्वितीया विभक्ति एकवचन। **महीभुजे–** चतुथी विभक्ति एकचवन। **निवेदयिष्यतः–** नि+विद्+णिच्+शतृ प्रत्यय, लृटलकार प्र0 पु0 द्विवचन। **मनः–** मन्+असुन् प्रत्यय। **प्रवक्तुम्**–प्र+वच्+तुमुन् प्रत्यय। **हितैषिणः**–हित्+इष्+णिनि प्रत्यय। **इच्छन्ति**–इच्छ्+झि प्रत्यय। झि को 'अन्त् आदेश होकर लट्लकार प्र0 पु0 बहुवचन का रूप बना है।

छन्द– वंशस्थ।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

अर्थान्तरन्यास का लक्षण– सामान्यं विशेषो वा तदन्येन समर्थ्यते।

यत्तु सोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येणतरेण वा।। (काव्यप्रकाश दशमोल्लास)

यहाँ पर सामान्य के द्वारा विशेष कथन का समर्थन किया गया है। इसलिए अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है। श्लोक में 'महीं–महीं' की सकृत् हुई है। अर्थात् एकबार आया है। इसलिए यहाँ पर छेकानुप्रास अलङ्कार है। दोनों अलङ्कारों के योग से संसृष्टि नामक तीसरा अलङ्कार भी है।

टिप्पणी– इस पद्य में वनेचर अपने कथन की भूमिका निर्मित कर रहा है। वह हस्तिनापुर में जाकर प्रजाओं के प्रति दुर्योधन के व्यवहार को देखा। राजसभा को उसने राजा दुर्योधन की तरफ अनुरक्त देखा। सुयोधन के उत्कर्ष का वर्णन करने से कहीं महाराजा युधिष्ठिर क्रोधित न हो जाए। यह सब ध्यान में रखकर वह इस प्रकार की भूमिका बांध रहा है। स्वकथन का समर्थन इस सूक्ति के माध्यम से करता है कि– "अपने राजा का हित चाहने वाला सेवक कभी असत्यमय प्रिय वचन नहीं कहना चाहता है।" इस सूक्ति में वनेचर ने सत्य कथन का पालन किया है।

प्रकरण– यहाँ पर वनेचर अपने स्वामी युधिष्ठिर से अप्रिय और सत्य समाचार सुनाने का आदेश प्राप्त करके, शब्द तथा अर्थ से युक्त कथन को कहना प्रारम्भ किया–

द्विषां विघाताय विधातुमिच्छतो
रहस्यनुज्ञामधिगम्य भूभृतः।
स सौष्ठवौदार्यविशेषशलिनीं
विनिष्चतार्थामिति वाचमाददे।।3।।

अन्वय– द्विषाम् विघाताय विधातुम् इच्छतः भूभृतः रहसि अनुज्ञाम् अधिगम्य स विशेषशलिनीम सौष्ठवौदार्य विनिश्ति अर्थाम् इति वाचम् आददे।

शब्दार्थ–द्विषाम् विघाताय– शत्रुओं या दुष्टों के, विनाश के लिए। **विधातुम्–** विधिपूर्वक उद्यत होने के लिए। **इच्छतः–** इच्छा करने वाले। **भूभृतः–** महाराजा युधिष्ठिर की। **रहसि–**एकान्त में। **अनुज्ञाम्–** आज्ञा को। **अधिगम्य–** जानकर या प्राप्त करके। **सः–** वह वनवासी। **विशेषशलिनीम्–** विशेष रूप से। **सौष्ठवौदार्य–** शब्द सौष्ठव और उदारता से युक्त। **विनिश्चित–**निश्चित। **अर्थाम्–** अर्थ वाली। **इति–** इस प्रकार। **वाचम्–** वाणी को। **आददे–** बोला या कहा।

अनुवाद– वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि–दुष्टों के विनाश के लिए, विधिपूर्वक प्रयत्न करने की इच्छा वाले भूपति युधिष्ठिर की एकान्त में आज्ञा को प्राप्त करके, वह वनवासी विशेष रूप से शब्द सौष्ठव और उदारता से युक्त इस प्रकार निश्चित अर्थ रखने वाले वचन को कहा।

संस्कृत अनुवाद– ब्रह्मचरवेशधारिणा किरातः एकान्तस्थाने युधिष्ठिरं आज्ञां प्राप्य शब्दार्थशक्तिविशिष्टां वाणीं शत्रुजनविनाशाय उद्यतं युधिष्ठिरं उवाच।

समास– भूभृतः–उपपद तत्पुरुष समास। सौष्ठवौदार्य–सौष्ठवश्च औदार्यश्च (द्वन्द्व समास)।

व्याकरण– विघाताय– 'वि' उपसर्ग 'हन्' धातु 'घञ्' प्रत्यय (वि+हन्+घञ्)। **विधातुम्–** वि+धा धातु+तुमुन् प्रत्यय = विधातुम्। **भूभृतः–** भू+भृत्+क्विप् प्रत्यय= भूभृतः। **अनुज्ञाम्–** अनु+ज्ञा+अङ् प्रत्यय (ताम्) = अनुज्ञाम्। **अधिगम्य–** 'अधि' उपसर्ग 'गम्' धातु ल्यप्/क्त्वा प्रत्यय= अधिगम्य (करके के योग में 'क्त्वा

और ल्यप्' दोनों प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है)। आददे–आङ्.+'दा' धातु लिट् लकार प्र0 पु0 एकवचन।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– वृत्यानुप्रास अलङ्कार।

लक्षण– एकस्याप्यसकृत्परः। एक तथा अपि शब्द के प्रयोग से अनेक व्यञ्जन अक्षर दो बार या उससे अधिक बार सादृश्य हो तो वहाँ पर वृत्यानुप्रास अलङ्कार होता है। जैसे–यहाँ पर व, ध, द, य आदि वर्ण कई बार समान रूप से आये हुए हैं।

टिप्पणी– वनेचर जो पूर्व श्लोक में कथन की भूमिका बना रहा था। वह 'सौष्ठवौदार्यशलिनीम्' के माध्यम से कथन की विशेषता युधिष्ठिर के समुख अभिव्यक्त करता है तथा भारवि की काव्यशैली की विशेषताओं को भी बता रहा है।

प्रकरण– इस श्लोक में वनेचर गुप्तचर के कर्त्तव्यों का वर्णन करते हुए कहता है कि–

क्रियासु युक्तैर्नृप चारचक्षुषो,
न वञ्चनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः।
अतोऽर्हसि क्षन्तुमसाधु साधु वा,
हितं मनोहारि च दुलर्भ वचः।।4।।

अन्वय– हे नृप ! क्रियासु युक्तैः अनुजीविभिः चारचक्षुः प्रभवः न वञ्चनीयाः। अतः असाधु साधु वा क्षन्तुम् अर्हसि। हितम् मनोहारि च वचः दुर्लभम्।

शब्दार्थ– हे नृप !– हे राजन् ! **क्रियासु–** कार्यों में। **युक्तैः–** नियुक्त किये गये या लगाये गये। **अनुजीविभिः–** सेवकों के द्वारा। **चारचक्षुषः–** गुप्तचर रूपी नेत्र वाले वनेचर के द्वारा। **प्रभवः–** राजा लोगों को। **न वञ्चनीयाः–** नहीं ठगा जाना चाहिए। **अतः–** इसलिए। **असाधु–** न सुनने योग्य वचनों को। **साधु वा–** अथवा सुनने योग्य वचनों को। **क्षन्तुम् अर्हसि–** क्षमा करने योग्य हो। **हितम्–** हितकर। **मनोहारि–** मनोहर। **च–** और। **वचः–** वचन। **दुर्लभम्–**कठिन या दुर्लभ होता है।

अनुवाद– हे राजन् ! कार्यों में लगाये गये सेवकों द्वारा राजा लोगों को कभी नहीं ठगना चाहिए। क्योंकि सुनने योग्य अथवा न सुनने योग्य वचनों को सुनकर आप (युधिष्ठिर) क्षमा करने में समर्थ है। निश्चय ही इस संसार में हितकर और मनोहर वचन कहने वाले लोग बहुत ही दुर्लभ है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके वनेचरः कथयति– भो राजन्! राजकार्येषु नियुक्तैः अनुचरः स्वस्वामिनः कदापि न वञ्चनीयाः। अहं यत् कथयामि तत् परिणाम हितकारि प्रियं अप्रियं च वचः दुःखेन क्रियते। अतः मम भवताः क्षम्यताम् कुरु।

समास– अनुजीविभिः– उपपद तत्पुरुष समास। चारचक्षुषः– चार है आंखे जिसकी (राजा लोग) बहुब्रीहि समास।

व्याकरण– चारचक्षुः– अण् प्रत्यय। **अर्हसि–** लट् लकार म0 पु0 एकवचन। **वञ्चनीयाः–** अनीयर प्रत्यय। **क्षन्तुम्–** क्षम्+तुमुन् प्रत्यय। **मनोहारि–** मनः+हृ+णिनि प्रत्यय। **दुर्लभम्–** दुर्+लभ्+खल् प्रत्यय।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।
रीति– पाञ्चाली रीति।
गुण– प्रसाद गुण।
अलङ्कार– अर्थान्तरन्यास और काव्यलिङ्ग अलङ्कार है।
काव्यलिङ्ग का लक्षण– काव्यलिङ्ग हेतोर्वाक्यपदार्थता। (काव्यप्रकाश)
अर्थात्– जब वाक्यार्थ या पदार्थ के रूप में कथन कहाँ जाय तो वहाँ पर काव्यलिङ्ग नामक अलंकार होता है।
जैसे– ''हितम् मनोहारि च दुर्लभम् वचः'' इस सूक्ति के द्वारा वनेचर ने पूर्व कथन का हेतु निर्देशित किया है। इसलिए यहँ पर काव्यलिङ्ग नामक अलंकार है।
गुप्तचर–गुप्त रूप में विचरण करने वाला गुप्तचर कहलाता है।
कौटिलय ने अर्थशास्त्र में मुख्य रूप से गुप्तचर के दो प्रकार बताये हैं। 1
1.संस्थागत गुप्तचर– कापटिक, उदास्थित, गृहपतिक, वैदेहक, और मुण्डक के भेद से संस्थागत गुप्तचर पाँच प्रकार के होते हैं।
2.संचारगत गुप्तचर– स्त्रितीक्ष्णरसदभिक्षुकीश्च चतुर्धा।
इन गुप्तचरों को राजा का नेत्र कहा जाता है। राजा लोग गुप्तचर के द्वारा दी हुई सूचनाओं के आधार पर राज्य का संचालन और नीति को निर्धारित करते हैं। राजनीतिशास्त्र में कहा गया है कि– राजा लोग गुप्तचरों की आंख से देखते हैं। विद्वान् लोग शास्त्ररूपी आंखों से देखते हैं। गाये गन्धरूपी आंख से देखती हैं तथा सामान्य लोग केवल आंखों से ही देखते हैं–

चारैः पश्यन्ति राजानः शास्त्रैः पश्यन्ति पण्डितः।
गावः पश्यन्ति गन्धेन चक्षुर्भ्यामितरे जनाः।।

टिप्पणी– प्रस्तुत पद्य में वनेचर गुप्तचर के कर्त्तव्यों का निरूपण करते हुए कहता है कि–गुप्तचर को अपने राजा के समकक्ष किसी बात को घूमा फिराकर नहीं कहना चाहिए। वह अपने कथन का समर्थन 'हितं मनोहारि च दुर्लभम् वचः' सूक्ति के माध्यम से करता है।
प्रकरण–इस श्लोक में वनेचर राजा और मन्त्री के मध्य परस्पर सामंजस्य बनाये रखने की भावना को वर्णित कर रहा है।

स किं सखा साधु न शास्ति योऽधिपं,
हितान्न यः संश्रृणुते स किं प्रभुः।
सदाऽनुकूलेषु हि कुर्वते रतिं,
नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः ।।5।।

अन्वय– यः अधिपम् साधु न शास्ति सः किम् सखा। यः हितात् न संश्रृणुते सः किम् प्रभुः। हि नृपेषु अमात्येषु च अनुकूलेषु सर्वसम्पदः सदा रतिम् कुर्वते।
शब्दार्थ– यः– जो (वनेचर)। **अधिपम्–** राजा को। **साधु–** अच्छा। **न–** नहीं। **शास्ति–** उपदेश देता है। **सः–** वह। **किं सखा–** कैसा मित्र है अर्थात् कुमित्र है। **यः–** जो। **हितात्–** हित से। **न–**नहीं। **संश्रृणते–** सुनता है। **सः–** वह। **किंप्रभु–** कैसा स्वामी है अर्थात् कुत्सित राजा है। **हि–** क्योंकि। **नृपेषु–** राजाओं में। **अमात्येषु–** मंत्रियों में। **च–** और। **अनुकूलेषु–** होने पर। **सर्वसम्पदा–**सभी प्रकार की सम्पत्तियाँ। **सदा–** सदैव या लगातार। **रतिम्–** अनुराग। **कुर्वते–** करती हैं।

अनुवाद– जो मित्र राजा को अच्छा उपदेश नहीं देता वह कैसा मित्र है अर्थात् कुमित्र है। जो राजा हितैषी बातों को नहीं सुनता वह कैसा स्वामी है अर्थात् कुत्सित राजा है। क्योंकि राजाओं और मंत्रियों के परस्पर अनुकूल रहने पर सभी प्रकार की संपत्तियां अनुराग करती है।

संस्कृत अनुवाद– यत् सेवकः राजानं उचितं न उपदिशति स किं सखा वा कुत्सित मित्रं भवति। यः स्वामी हितैषिणः आमात्यगुप्तचरस्य वार्ता न श्रृणोति सोऽपि कुत्सितः राजा कथ्यते। यत्र राज्ञाऽमात्यौ एकमतेन निर्णयं क्रियते तर्हि सकलसम्पदा अनुरागं कुर्वते।

समास– किंप्रभुः– कुत्सितः प्रभु इति किंप्रभु में कर्मधारय समास। सर्वसम्पदा–सर्वाः सम्पदः इति कर्मधारय समास।

व्याकरण– 'शास्' धातु में तिप् प्रत्यय लगाने पर शास्ति शब्द बना है। **संश्रृणुते–** लट्लकार प्र0 पु0 एकवचन। **अमात्येषु–** सप्तमी विभक्ति बहुवचन। **रतिम्–** रम् धातु क्तिन प्रत्यय (ताम्)=रतिम्। **अनुकूलेषु–**सप्तमी विभक्ति बहुवचन। **नृपेषु–**सप्तमी विभक्ति बहुवचन। **कुर्वन्ते–** कृ+झ प्रत्यय लट्लकार प्र0 पु0 बहुवचन।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

सामान्यं वा विशेषो वा तदन्येन समर्थ्यते यत्तु सोऽर्थान्तरन्यासः।

यहाँ राजा और मंत्रियो के अनुकूल रहने पर सम्पदा रूपी लाभ होने पर कार्य का समर्थन किया गया है। इसलिए अर्थान्तरन्यास अलङ्कार है।

टिप्पणी– इस पद्य में वनेचर के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि राजा और मंत्री के बीच सामंजस्य बने रहने पर राज्य में सभी प्रकार की धन संपदा का विकास होता है। यदि राजा और मंत्री आपस में ताल–मेल बनाकर कार्य नहीं करते तो दोनों ही निन्दनीय हैं। अतः राजा और मंत्री दोनों को अनुकूल बनें रहना चाहिए।

प्रकारण– समुचित रूप से राज्य का संचालन करने के लिए छः प्रकार की नीतियों में पारंगत होना अत्यन्त आवश्यक है। वनेचर दुर्योधन के गूढ रहस्य को जानकर अपने स्वामी युधिष्ठिर के सम्मुख वर्णन करते हुए कहता है कि–

निसर्ग दुर्बोधमबोध विक्लवाः क्व
भूपतीनां चरितं क्व जन्तवः।
तवानुभावोऽयमवेदि यन्मया
निगूढतत्वं नयवर्त्म विद्विषाम्।।6।।

अन्वय– निसर्गदुर्बोधम् भूपतीनाम् क्व चरितम् ? अबोधविक्लवाः (मत्सदृशाः) जन्तवः क्व ? मया विद्विषाम् निगूढतत्वम् नयवर्त्म यत् अवेदि अयम् तव अनुभावः।

शब्दार्थ– निसर्गदुर्बोधम्– स्वभाव से दुर्जेय या कठिन। **भूपतिनाम्–** राजाओं का। **चरितम्–** चरित्र। **क्व–** कहां। **अबोधविक्लवाः–** न जानने या अज्ञानता के कारण विकल। **मत्सदृशाः–** मेरे जैसा। **जन्तवः–** प्राणी। **क्व–** कहाँ। **मया–** मेरे द्वारा। **विद्विषाम्–** विशेष करके द्वेष रखने वाले दुर्योधन आदि शत्रुओं को।

निगूढतत्त्वम्– छिपे हुए गूढ़ रहस्य वाले। **नयवर्त्म**– नीति के मार्ग को। **अवेदि**– जान लिया है। **अयम्**– यह। **तव**– तुम्हारा अर्थात् महाराज युधिष्ठिर आप का। **अनुभावः**– प्रभाव है।

अनुवाद– स्वभाव से कठिन राजाओं का चरित्र कहाँ। अज्ञानता के करण विकल मेरे जैसा प्राणी कहां। फिर भी मैंने गुप्त रहस्य रखने वाले दुर्योधन आदि शत्रुओं के, नीति के मार्ग को जान लिया हैं। हे महराज युधिष्ठिर यह आपका ही प्रभाव है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके वनेचरः स्वाहङ्कारम् परिहरन् कथयति भो राजन् ! स्वभावतः राज्ञाम् दुर्ज्ञेयम् वृत्तं क्व चरितं अज्ञानविकलजनः वनेचरः क्व। यत् शत्रूणाम् गुप्त रहस्यम् नीतिमार्गं ज्ञातम्। अस्मिन् सफलीभूत विषये भवतः प्रभावं क्व कारणं न अत्र सन्देहः।

समास– **निसर्गदुर्बोधम्**– तृतीया तत्पुरुष समास। **निगूढतत्त्वम्**– निगूढं तत्त्वं यस्य सः (बहुब्रीहि समास) । **नयवर्त्म**– नयस्य वर्त्म इति (षष्ठी तत्पुरुष समास)।

व्याकरण– **निसर्ग**–'नि' उपसर्ग 'सृज्' धातु घञ् प्रत्यय लगाने पर 'निसर्ग' शब्द बना है। **तव**– षष्ठी विभक्ति एकवचन का रूप है। **भूपतिनाम्**– षष्ठी विभक्ति बहुवचन का रूप है।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति–पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– विषम अलङ्कार।

लक्षण– क्वचिद्यदतिवैधर्म्यान्न श्लेषो घटनामियात्।

कर्तुः क्रियाफलावाप्तिर्नैवानर्थश्च यद् भवेत्।। (काव्यप्रकाश)

यहाँ पर इस उक्ति के द्वारा ''भूपतिनां निसर्गदुर्बोध चरितं क्व एवं अबोधविक्लवाः जन्तवः क्व''। दोनों के परस्पर विषम चरित उद्घाटित होने के कारण विषम नामक अलङ्कार है।

राज्य के वैदेशिक नीति संचालन के लिए कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में छः विशेष गुणों का वर्णन किया है–

1. सन्धि 2. विग्रह 3. यानम् 4. आसन 5. संश्रय 6. द्वैधीभाव। इस प्रकार राजाओं के नीति मार्ग इन छः भागों में विभक्त हैं।

टिप्पणी– वनेचर के इस प्रकार आचरण करने से उसकी अभिमानहीनता ज्ञात होती है। जिससे उसके नीति निपुणता में निरन्तर वृद्धि होती है। इस पद्य के आरम्भ में कालिदास के लघुत्रयी महाकाव्य रघुवंशम् का प्रभाव दृष्टिगत होता है–

क्व सूर्य प्रभवो वंशः क्व चाल्पविषयाः मतिः।

प्रकरण– इस पद्य में वनेचर राजा से कहता है कि छलपूर्वक जीती गई पृथिवी को पुनः दुर्योधन नीतिपुर्वक जितने की चेष्टा कर रहा है।

विशङ्कमानो भवतः पराभवं,
नृपासनस्थोऽपि वनाधिवासिनः।
दुरोदरच्छद्मजितां समीहते
नयेन जेतुं जगतीं सुयोधनः।।7।।

अन्वय– सुयोधनः नृपासनस्थ अपि वनाधिवासिनः भवतः पराभवम् विशङ्कमानः दुरोदरच्छद्मजिताम् जगतीम् नयेन जेतुम् समीहते।

शब्दार्थ–सुयोधनः– दुर्योधन। **नृपासनस्थः–** राज्य रूपी सिंहासन पर आरूढ़। अपि– भी। **वनाधिवासिनः–** वन में निवास करने वाले। **भवतः–** आप से (महाराज युधिष्ठिर)। **पराभवम्–** पराजय या हार की। **विशङ्कमाना–** आशङ्का करता हुआ। **दुरोदरच्छद्मजिताम्–** द्यूतक्रीडा में छल–कपट के द्वारा जीती गई। **जगतीम्–** पृथिवी को। **नयेन–** नीति से। **जेतुम्–**जितना। **समीहते–** चाहता है।

अनुवाद– प्रस्तुत श्लोक में वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि कुरुदेशवासी दुर्योधन राज्य सिंहासन पर आसीन होते हुए भी वन में निवास करने वाले राजा युधिष्ठिर से पराजय की आशङ्का करता हुआ, द्यूतक्रीडा में छल–कपट के द्वारा जीती गई पृथिवी को पुनः दुर्योधन नीतिपूर्वक जितना चाहता है।

समास– नृपासनस्थः– उपपद तत्पुरुष समास। **वनाधिवासिनः–** सप्तमी तत्पुरुष समास। **दुरोदरच्छद्मजिताम्–** तत्पुरुष समास।

व्याकरण– नृपासन+स्था+क् प्रत्यय। **वनाधिवासिनः–** वन+अधि+वस् धातु+णिनि प्रत्यय। **वासिनः–** पञ्चमी विभक्त एकवचन का रूप है। विशङ्कमानः–'वि' उपसर्ग शंक् धातु शानच् प्रत्यय (वि+शक्+शानच्=विशङ्कमानः)। **नयेन–** तृतीया विभक्ति एकवचन। **जेतुम्–** जि धातु तुमुन् प्रत्यय जि+तुमुन्= जेतुम्। समीहते– सम्+ईह्+त=आत्मनेपद लट्लकार प्र0 पु0 एकवचन।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– काव्यलिङ्ग अलङ्कार।

लक्षण–"काव्यलिङ्ग हेतोर्वाक्यपदार्थता" (काव्य प्रकाश)।

अर्थात् जहाँ वाक्यार्थ या पदार्थ के रूप में हेतु का कथन किया जाय तो वहाँ पर काव्यलिङ्ग नामक अलङ्कार होता है।

'नयेन जेतुम् जगतीम् सुयोधनः' वनेचर के इस कथन में पदार्थ के प्रति हेतु प्रकट करने के कारण काव्यलिङ्ग अलङ्कार है।

सुयोधनः– वनेचर ने यह विशेषण 'दुर्योधन' के लिए प्रयोग किया है। धृतराष्ट्र के 100 पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र दुर्योधन था। माता गान्धारी थी। पत्नी भानुमती थी।

टिप्पणी– दुर्योधन राज्य सिंहासन पर आरुढ़ होते हुए भी युधिष्ठिर से पराजित होने की आशङ्का करता है। इससे दुर्योधन के नीति की अनिपुणता ज्ञात होती है। शत्रु को कभी छोटा कहीं मानना चाहिए। इस नीति को दुर्योधन अच्छी तरह जानता है। इसलिए वह द्यूतक्रीडा में जीती गई पृथिवी को बौद्दिक नीति से प्रजाओं के प्रति अनुराग दिखाकर पुनः अपने अधीन करना चाहता है। इसीलिए वह राज्य लिप्सा के प्रयोजन से सभी प्रकार से सावधान होकर युधिष्ठिर के द्वारा सुखपूर्वक जीता जा सकता है।

प्रकरण– इस पद्य में वनेचर सङ्गति के प्रभाव का वर्णन करते हुए कहता है कि–

तथापि जिह्मः स भवज्जिगीषया
तनोति षुभ्रं गुणसम्पदा यषः।
समुन्नयन् भूतिमनार्यसङ्गमाद्
वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः।।8।।

अन्वय– तथापि जिह्मः सः भवज्जिगीषया गुणसम्पदा शुभ्रम् यशः तनोति भूतिम् समुन्नयन् अनार्यसङ्गमात् महात्मभिः सह विरोधाः अपि वरम्।

शब्दार्थ– तथापि– फिर भी। **जिह्मः–** कुटिल। **सः–** वह (दुर्योधन)। **भवज्जिगीषया–** आपको जीतने की इच्छा से अर्थात् युधिष्ठिर को जीतने की इच्छा से। **गुणसम्पदा–** दया–दान आदि गुणों से युक्त। **शुभ्रम्–** स्वच्छ या निर्मल। **यशः–** यश को। **तनोति–** फैला रहा है। **भूतिम्–** उत्कर्ष को। समुन्नयन्– बढ़ाते हुए। **अनार्यसङ्गमात्–** दुष्टों की संगति से। **महात्मभिः सह–** महात्माओं के साथ। **विरोधाः–** विरोध करना। **अपि–** भी। **वरम्–** अच्छा।

अनुवाद– वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि हे महाराज तुम्हारे प्रति सन्देह करता हुआ वह कुटिल दुर्योधन आपको जीतने की इच्छा से दया–दान आदि गुणों से युक्त होकर अपने निर्मल कीर्ति को बढ़ा रहा है। क्योंकि उत्कर्ष की वृद्धि करते हुए दुष्ट पुरुषों की अपेक्षा महान् पुरुषों के साथ विरोध करना श्रेष्ठ होता है।

संस्कृत अनुवाद– अत्र श्लोके वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति सः कुटिलः दुर्योधनः शङ्कायमानः भवत्। सः दयादानादि गुणैः भवन्तं जेतुमिच्छया शुभ्रम् यशः विस्तारयति। भवतः सार्धं विग्रह अपि दुष्टजनः अपेक्षया सज्जनैः सह वैरमऽपि श्रेष्ठं भूयते।

समास– भवज्जिगीषया– भवतः जिगीषा इति भवज्जिगीषा तया= तत्पुरुष समास। **अनार्यः–** न आर्यः = नञ तत्पुरुष समास। **महात्मभिः–** महान् च असौ आत्मा =कर्मधारय समास।

व्याकरण– तथापि– तद्+थाल् प्रत्यय+अपि। **सः–** पुल्लिङ्ग प्रथमा विभक्ति एकवचन। **भवतः–** पञ्चमी और षष्ठी विभक्ति एकवचन। तनोति–लट्लकार प्र0 पु0 एकवचन। **समुन्नयन्–** सम्+उन्+नी+शतृ प्रत्यय। **भूतिम्–** भू+क्तिन् प्रत्यय= भूतिम् (द्वितीया विभक्त एकवचन)। **विरोधः–** वि+रुध्+घञ् प्रत्यय।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– काव्यलिङ्ग अलङ्कार।

लक्षण– काव्यलिङ्ग हेतोर्वाक्यपदार्थता (काव्यप्रकाश)

यहाँ पर कार्य का समुन्नयन् होने के कारण काव्यलिङ्ग नामक अलङ्कार है। 'वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः'' सूक्ति में सामान्य का विशेष के द्वारा समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलङ्कार भी है।

टिप्पणी– इस पद्य में दुर्योधन की नीति का वर्णन किया गया है। वह स्वभावतः दया–दान आदि गुणों से रहित होने पर भी प्रजा को अपने प्रति आसक्त करने के लिए युधिष्ठिर के सद्गुणों का अनुकरण करता है। जिसके कारण प्रजाएं उसके गुणों में लीन होकर युधिष्ठिर को भूल जाय। जैसा कि हिन्दी में कहा गया है कि–सङ्गत से गुण होत है, सङ्गत से गुण जात। यह दुष्ट दुर्योधन महापुरुष युधिष्ठिर के साथ विरोध करके उनके सद्गुणों को अपने में समाविष्ट करके प्रजाओं के साथ सज्जनतापूर्ण व्यवहार करता है।

प्रकरण– इस श्लोक में दुर्योधन ने छः शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लिया है। इसी का वर्णन करते हुए वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि–

कृतारिषड्वर्गजयेन मानवीम्
ऽगम्यरूपां पदवीं प्रपित्सुना।
विभज्य नक्तन्दिवमस्ततन्द्रिणा
वितन्यते तेन नयेन पौरुषम्।।9।।

अन्वय– अगम्यरूपाम् कृतारिषड्वर्गजयेन मानवीम् पदवीम् प्रपित्सुना अस्ततन्द्रिणा तेन नक्तन्दिवम् विभज्य नयेन पौरुषम् वितन्यते।

शब्दार्थ– कृतारिषड्वर्गजयेन–काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद् और मात्सर्य इन छः शत्रुओं को जीत लिया है जिस दुर्योधन ने। **अगम्यरूपाम्–** जो इन्द्रियों द्वारा अगोचर है अर्थात् सामान्य व्यक्ति की समझ में न आने वाला। **मानवीम्–** आचार्य मनु की। **पदवीम्–** पद्धति को। प्रपित्सुना– प्राप्त करने की इच्छा से। **अस्ततन्द्रिणा–** आलस्य से रहित होकर। **तेन–** उस (दुर्योधन द्वारा)। **नक्तन्दिवम्–** रात–दिन को। **विभज्य–** विभाजित करके। **नयेन–** नीतिपूर्वक। **पौरुषम्–** पुरुषार्थ को। **वितन्यते–** विस्तार कर रहा है।

अनुवाद– इस श्लोक में वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि उस दुर्योधन ने इन्द्रियों द्वारा अगोचर अर्थात् सामान्य व्यक्ति के समझ में न आने वाला काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य इन छः शत्रुओं को जीत लिया (अपने वश में करके) है। आचार्य मनु द्वारा दी गई दुष्कर शासन पद्धति को प्राप्त करने की इच्छा से उस दुर्योधन ने रात और दिन का विभाजन करके (रात–दिन के कार्यों की अलग–अलग समय सारणी बनाकर) नीतिपूर्वक अपने पुरुषार्थ का विस्तार कर रहा है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति सः दुर्योधनः कामक्रोधादि षड्शत्रून् विजित्य। आचार्यमनुः उपदिष्टां प्रजापालनपद्धतिं प्राप्तुम् इच्छन् नक्तं दिवं च विभज्य। नीतिमार्गेण पुरुषार्थं प्रसारयति।

समास– अगम्यरूपाम्– नञ् तत्पुरुष समास। **अस्ततन्द्रिणा–** अस्ता तन्द्रिः यस्य सः, वहुब्रीहि समास। **नक्तन्दिवम्–** नक्तं च दिवा च, द्वन्द्व समास।

व्याकरण– कृत– कृ धातु 'क्त' प्रत्यय=कृत। **जयेन–** तृतीया विभक्त एकवचन। **मानवीम्–** मनु+अण्+डीप् प्रत्यय, द्वितीया विभक्त एकवचन। **पदवीम्–** द्वितीया विभक्त एकवचन। **तेन–** तृतीया विभक्त एकवचन। **विभज्य–**वि+भिद्+ल्यप् प्रत्यय=विभज्य। **नयेन–**तृतीया विभक्त एकवचन। **वितन्यते–** वि उपसर्ग तन् धातु 'त' प्रत्यय लगाने पर लट्लकार प्र0 पु0 एकवचन का रूप बना है।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– वृत्यानुप्रास अलङ्कार है।

लक्षण– 'एकस्याप्यसकृत्परः'।

अर्थात् जहाँ पर शब्द के प्रयोग से अनेक व्यञ्जन अक्षर दो या दो से अधिक बार सादृश्य या समान हो तो वहाँ पर वृत्यानुप्रास अलङ्कार होता है। इस पद्य में य, न, त अक्षर की अनेक बार आवृत्ति होने के कारण वृत्यानुप्रास अलङ्कार हैं।

आचार्य कौटिल्य ने अपने ग्रंथ अर्थशास्त्र में छः शत्रुओं का वर्णन किया है–काम, क्रोध, लोभ, मान, मद और हर्ष। कौटिल्य का मानना है कि जिस प्रकार इन छः शत्रुओं का परित्याग करके अन्तः इन्द्रियों को

अपने वश में किया जा सकता है। ठीक उसी प्रकार इन शत्रुओं से रहित होकर राज्य को अपने अधीन किया जा सकता है।

काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्य को,
गले से मिटा दे तो क्या बात है ।।

टिप्पणी– प्रजा प्रिय राजा दुर्योधन सद्गुणों से युक्त होने के साथ–साथ नीति और उद्यम में निपुण थे। क्योंकि उद्यम के बिना नीति को बन्ध्या कहा गया है तथा नीति के बिना उद्यम पंगु है। दुर्योधन अपने राज्यरूपी यश को अर्जित करने के लिए सभी दोषों को त्यागकर आचार्य मनु के नीति के अनुसार अपने कार्यों में सतत् प्रयत्नशील है।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में दुर्योधन की कूटनीतिक चेष्टाओं का वर्णन करते हुए वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि–

सखीनिव प्रीतियुजोऽनुजीविनः
समानमानान् सुहृदष्च बन्धुभिः।
स सन्ततं दर्षयते गतस्मयः,
कृताधिपत्यामिव साधु बन्धुताम्।।10।।

अन्वय– सः गतस्मयः अनुजीविनः प्रीतियुजः सखीन् इव सुहृदः बन्धुभिः इव समानमानान् बन्धुताम् कृताधिपत्याम् इव साधु सन्ततं दर्शयते।

शब्दार्थ– सः– वह दुर्योधन। **गतस्मयः–** अभिमानरहित होकर। **अनुजीविनः–** सेवकों को। **प्रीतियुजः–** प्रेम–युक्त। **सखीन् इव**–मित्रों के समान। **सुहृदः–** मित्रों के। **बन्धुभिः इव–** भाईयों के समान। **समानमानान्–** समान सम्मान वालों के सादृश्य। **बन्धुताम्–** भाईयों के समूहों को। **कृताधिपत्याम् इव–** जैसे उसने राजस्व को प्राप्त कर लिया हो। **साधु–** अच्छी प्रकार से। **सन्ततं–** सदैव। **दृश्यते**–प्रदर्शन करता है।

अनुवाद– वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि वह कुटिल दुर्योधन अभिमान से रहित होकर सेवकों के साथ प्रेमपूर्वक मित्रों जैसा व्यवहार करता है और मित्रों के साथ समानपूर्वक सम्मान रखने वाले भाइयों जैसा तथा बन्धुगणों के साथ ऐसा लगता है जैसे उसने स्वामित्व को प्राप्त कर लिया हो। अतः वह निरन्तर अपने अच्छे व्यवहार को प्रदर्शित करता है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति भो राजन् ! अहो दुर्योधनः व्यवहारं कृते नैपुण्यम् अस्ति। सः अहङ्कारविहीनः स्म भृत्यैः सह मित्रवत् मित्रैः सह बन्धुवत् बन्धुभिः सह भूपतिः इव व्यवहारं क्रियते। इत्थं सः सुयोधनः सर्वैः सार्धं प्रेमपूर्वक सम्यक् व्यवहारं करोति।

समास– गतस्यमयः– गतः मयः यस्मात् सः = बहुबीहि समास। **अनुजीविनः–** अव्ययीभाव समास। **सुहृदः**–शोभनं हृदयं यस्य सः = बहुबीहि समास। **कृताधिपत्यम्–** कृतम् आधिपत्यम् यस्य सः = बहुबीहि समास।

व्याकरण– प्रीतियुजः– प्री धातु क्तिन् प्रत्यय, प्री+क्तिन् =प्रीति। **सखीन्–** द्वितीया विभक्त बहुवचन। **बन्धुभिः–** तृतीया विभक्त बहुवचन। **बन्धुताम्–** बन्धु+तल्+टाप् प्रत्यय। **गतस्यमयः**–गम्+क्त् प्रत्यय= गतः। **दर्शयते**–'दृश्' धातु 'णिच्' त प्रत्यय, लट्लकार प्र0 पु0 एकचवन।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– वृत्यानुप्रास अलङ्कार।

लक्षण– 'एकस्याप्यसकृत्परः'

इस श्लोक में भी न, स, व वर्ण में सादृश्यता होने के कारण वृत्यानुप्रास अलङ्कार है।

टिप्पणी– प्रस्तुत पद्य में दुर्योधन की सबल कूटनीतिज्ञ चेष्टा का वर्णन किया गया है। दुर्योधन राजा युधिष्ठिर के सादृश्य साधुप्रकृति का प्रजा प्रेमी राजा नहीं था। तथापि प्रजा को राजा युधिष्ठिर से विरक्त करके अपने प्रति अनुरक्त करने के लिए प्रजाओं के प्रति वात्सल्य जैसा प्रेम करता है और राजा की सभी चेष्टाओं का बहुत सावधानी पूर्वक अनुकरण करता है।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में दुर्योधन के प्रति धर्म, अर्थ काम इन त्रिवर्ग का वर्णन करते हुए वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि–

असक्तमाराधयतो यथायथं,
विभज्य भक्त्या समपक्षपातया।
गुणानुरागादिव सख्यमीयिवान्
न बाधतेऽस्य त्रिगणः परस्परम्।।11।।

अन्वय– (सः) यथायथं विभज्य समपक्षपातया भक्त्या असक्तम् आराधयतः अस्य गुणानुरागात् त्रिगणः सख्यम् ईयिवान् इव परस्परम् न बाधते।

शब्दार्थ– (सः–दुर्योधन) **यथायथं–** उचित प्रकार से या सम्यक् रूप से। **विभज्य–** विभाजन करके। **समपक्षपातया–** समान रूप से पक्षपात रहित होकर। **भक्त्या–** प्रेमपूर्वक। **असक्तम्–** निरासक्त भाव से। **आराधयतः–** सेवन करते हुए। **अस्य–** उस दुर्योधन के। गुणानुरागात्–दया, दान आदि गुणों के अनुराग से। **त्रिगणः–** धर्म, अर्थ और काम का समूह। **सख्यम्–** मित्रता को। **ईयिवान्–** प्राप्त हुए की। **इव–** भांति या समान। **परस्परम्–** आपस में। **न बाधते–** बाधा नहीं पहुंचाते हैं।

अनुवाद– वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि वह दुर्योधन पुरुषार्थत्रय का अच्छी प्रकार से विभाजन करके, समान रूप से पक्षपातरहित होकर, प्रेमपूर्वक निरासक्त भाव से त्रिवर्ग का सेवन कर रहा है। राजा दुर्योधन अपने दया, दान आदि गुणों के अनुराग से, धर्म अर्थ और काम समूहों से मित्रता को प्राप्त कर रहा है। आपस में उस दुर्योधन के प्रति प्रजाएं बाधा नहीं पहुंचा रही हैं।

संस्कृत अनुवाद– वनेचरः युधिष्ठिरात् कथयति सः दुर्योधनः कार्याणां यथायोग्यं विभागं कृत्वा समानरूपेण अनुरागेण समपक्षपातया अनासक्तपूर्वकं आराधयतः सर्वान् एवं उपसेवते फलतः नहि अस्ति एषु त्रिवर्गः कुत्रापि विरोधः एवं यथायोग्यंधर्मार्थकामादि त्रिवर्गः परस्परं न बाधा प्राप्यते।

समास– गुणानुरागात्– षष्ठी तत्पुरुष समास। **त्रिगणः–** त्रयानां गणाः समाहारः, द्विगु समास। **असक्तम्–** नञ् तत्पुरुष समास। **यथायथम्–** अव्ययीभाव समास।

व्याकरण– विभज्य– वि+भज्+ल्यप् प्रत्यय। सख्यम्–'सख्युर्यः' सूत्र से 'य' प्रत्यय लगाने पर अम् आदेश होकर 'सख्यम्' द्वितीया विभक्त एकवचन का रूप बना है।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति–पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– उत्प्रेक्षा अलङ्कार।

लक्षण– सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्।

अर्थात् जहाँ पर उपमेय में उपमान की सम्भावना की जाय वहाँ पर उत्प्रेक्षा नामक अलङ्कार होता है।

"गुणानुरागादिव सख्यमीयिवान न बाधतेऽस्य त्रिगणः परस्परम्।" इस उक्ति में उत्प्रेक्षा नामक अलङ्कार द्रष्टव्य है।

टिप्पणी– यहाँ पर दुर्योधन की नीति का वर्णन किया गया है। दुर्योधन के गुणों के प्रति प्रीति रखने के कारण पुरुषार्थत्रय आपस में उसे नुकसान नहीं पहुंचा रहे हैं। वास्तव में धर्म, अर्थ और काम ये तीनों गुण परस्पर विरोधी स्वभाव वाले हैं फिर भी इन तीनों का सेवन करता हुआ दुर्योधन अपने समय चक्र के अनुसार गुणों की उपेक्षा न करता हुआ अनासक्त भाव से अलग–अलग समय में तीनों गुणों का सेवन करता है।

प्रकरण– इस श्लोक में वनेचर के द्वारा सुयोधन के प्रति राज्य के चार उपायों का वर्णन किया गया है।

निरत्ययं साम न दानवर्जितं
न भूरि दानं विरहय्य सत्क्रियाम्।
प्रवर्तते तस्य विषेषशालिनी
गुणानुरोधेन विना न सत्क्रिया।।12।।

अन्वय– तस्य निरत्ययम् साम दानवर्जितम् न, भूरिदानम् सत्क्रियाम् विरहय्य न, विशेषशालिनी सत्क्रिया गुणानुरोधेन विना न प्रवर्तते।

शब्दार्थ– तस्य– उस दुर्योधन का। **निरत्ययम्–** बाधा से रहित होकर। **साम–** सामनीति। **दानवर्जितम् न–** दाननीति से रहित नहीं है। **भूरिदानम्–** अत्यधिक दान। **सत्क्रियाम्–** सत्कार को। **विरहय्य–** त्याग कर। **विशेष–शालिनी–** विशेष रूप से सुशोभित होने वाले। **सत्क्रिया–** सत्कार। **गुणानुरोधेन–** गुणों के प्रति अनुराग किये बिना। **न–** नहीं। **प्रवर्तते–** होती है।

अनुवाद– वह दुर्योधन बाधा से रहित है परन्तु वह सामनीति–दाननीति से रहित नहीं है। अत्यधिक दान देने के कारण आदर सत्कार से रहित नहीं है अर्थात् दया–दान आदि गुणों के साथ–साथ वह सभी का समान रूप से आदर सत्कार करता है। विशेषरूप से सुशोभित करने वाला सत्कार गुणों के प्रति अनुराग रखे बिना नहीं हो सकता है।

संस्कृत अनुवाद– वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति सामदाने च प्रदर्शयम् क्रियते कथयति सः दुर्योधनः सामदानदण्डभेदश्च नाम्नः उपायस्य प्रयोगे बहूनि कुशलः अस्ति। सः तस्य प्रयोगः दानेन एव करोति। दुर्योधनः यस्मै प्रचुरं दानं आदरपूर्वकं ददाति। सः दुर्योधनः योग्यताऽनुसारेण सत्कारं करोति गुणानुरोधने विना न विस्तारयति।

समास–दानवर्जितम्– दानेन वर्जितम्=तृतीया तत्पुरुष समास। **गुणानुरोधेन–** गुणस्य अनुरोधेन=षष्ठी तत्पुरुष समास। **विशेषशालिनी–** उपपद कर्मधारय समास।

व्याकरण– तस्य– पञ्चमी–षष्ठी विभक्ति एकवचन का रूप है। **निरत्ययं–** निः+अति+इण्+अच् प्रत्यय।

विरहय्य– वि+रह्+ल्यप् प्रत्यय, करके के अर्थ में 'क्त्वा' प्रत्यय भी है। **प्रवर्तते–** प्र+वृत्त+त प्रत्यय आत्मनेपद लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन का रूप है। **शालिनी–** शाल+णिनि+ङीप प्रत्यय। **अनुरोधेन–** तृतीया विभक्त एकवचन का रूप है। **सत्क्रियाम्–** द्वितीया विभक्त एकवचन का रूप हैं।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।
रीति– पाञ्चाली रीति।
गुण– प्रासद गुण।
अलङ्कार– एकावली अलङ्कार।
प्रकरण– प्रस्तुत पद्य में दुर्योधन की निष्पक्षता तथा शास्त्र के अनुसार बताये गये दण्ड–प्रक्रिया का वर्णन करते हुए वनेचर कहता है कि –

वसूनि वाञ्छन्न वषी न मन्युना
स्वधर्म इत्येव निवृत्तकारणः।
गुरूपदिष्टेन रिपौ सुतेऽपि वा,
निहन्ति दण्डेन स धर्मविप्लवम्।।13।।

अन्वय– वशी सः वसूनि वाञ्छन् न मन्युना न, निवृत्तकारणः स्वधर्मः एव इति गुरूपदिष्टेन दण्डेन रिपौ सुते अपि वा धर्मविप्लवम् निहन्ति।
षब्दार्थ– **वशी**–जितेन्द्रिय अर्थात् इन्द्रियों को स्वाधीन करने वाला। **सः**– वह दुर्योधन। **वसूनि**– धनों को। **वाञ्छन् न**– अभिलाषा न करते हुए। **मन्युना न**– क्रोध न करते हुए। **निवृत्तकारणः**– काम, क्रोध, मोह आदि कारणों को छोड़कर। **स्वधर्मः एव**– अपना धर्म ही है। **इति**– इस प्रकार। **गुरूपदिष्टेन**– मनु आदि आचार्यों द्वारा बताये गये। **दण्डेन**– दण्ड विधान से। **रिपौ**– शत्रु में। **सुतेऽपि वा**– अथवा पुत्र में भी। **धर्मविप्लवम्**– धर्म का उल्लंघन करने वाले को। **दण्डितः**– दण्ड देता है।
अनुवाद– इन्द्रियों को अपने अधीन रखने वाला वह दुर्योधन धन आदि द्रव्यों को चाहता हुआ भी नहीं चाहता है। क्रोधी स्वभाव वाला होकर भी क्रोध नहीं करता है। काम, क्रोध आदि कारणों को छोड़ देना ही यही अपना धर्म है, ऐसा मानकर मनु आदि आचार्यों के द्वारा बताये गये दण्ड विधान के अनुसार शत्रु और पुत्र को भी एक समान मानकर धर्म की अवहेलना करने वाले लोगों को दण्ड देता है।
संस्कृत अनुवाद– वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति सः दुर्योधनः जितेन्द्रियः नहि धनानि इच्छन् न क्रोधेन कोऽपि दण्डयति। लोभक्रोधादि कारणविहीनः सः गुरूपदिष्टेन दण्डेन स्वधर्मः इति राजधर्मः अस्ति। सः शत्रौ वा पुत्रे मात्रेण धर्मस्यऽतिक्रमणं समानमेव एव दण्डयति।
समास– **निवृत्तकारणः**– पञ्चमी तत्पुरुष समास। **गुरूपदिष्टेन**– षष्ठी तत्पुरुष समास। **धर्मविप्लवम्**– षष्ठी तत्पुरुष समास।
व्याकरण– **वसूनि**– द्वितीया विभक्ति बहुवचन। **वशी**– वश+इनि। 'वश' शब्द में 'इनि' प्रत्यय लगाने पर 'वशी' शब्द बना हुआ है। **रिपौ**– सप्तमी विभक्ति एकवचन। **दण्डेन**– तृतीया विभक्ति एकवचन। **निहन्ति**–'नि' उपसर्ग 'हन्' धातु 'तिप्' प्रत्यय लगाने पर यह शब्द निर्मित हुआ है। यह 'हन्' धातु 'लट्लकार' प्रथम पुरुष एकवचन का रूप है।
छन्द– वंशस्थ छन्द।
रस– वीर रस।
रीति– पाञ्चाली रीति।
गुण– प्रसाद गुण।
अलङ्कार– अनुप्रास अलङ्कार।
वर्णसाम्यमनुप्रासः।। काव्यप्रकाश नवमोल्लास।।

अर्थात्– व्यञ्जनवर्णों की समानता होने पर अनुप्रास नामक अलङ्कार होता है।

इस पद्य में 'न' वर्ण कई बार आया हुआ है। अतः अनुप्रास अलङ्कार है।

टिप्पणी– इस श्लोक में शास्त्र के अनुसार दण्ड प्रक्रिया तथा दुर्योधन की निष्पक्षता का वर्णन किया गया है। हस्तिनापुर वासी दुर्योधन इस बात को अच्छी तरह जानता था कि शत्रु वा पुत्र के द्वारा धर्म के प्रति विपरीत आचरण करने पर दोनों को समान रूप से दण्ड देने पर राजा की प्रजा के प्रति न्यायप्रियता दृष्टिगोचर होगी। इसीलिए वह प्रजा को प्रसन्नचित्त रखने के लिए पक्षपातरहित होकर दण्ड की प्रक्रिया को अपनाया है।

प्रकरण– इस श्लोक में भेदनीति का प्रयोग करने में कुशल दुर्योधन की निपुणता का वर्णन करते हुए वनेचर कहता है कि–

विधाय रक्षान् परितः परेतरान्
ऽशङ्कितःकारमुपैति शङ्कितः।
क्रियाऽपवर्गेष्वनुजीविसात्कृताः
कृतज्ञतामस्य वदन्ति सम्पदः।।14।।

अन्वय– (सः) शङ्कितः परितः परेतरान् रक्षान् विधाय अशङ्किताकारम् उपैति। क्रियाऽपवर्गेषु अनुजीविसात्कृताः सम्पदः अस्य कृतज्ञताम् वदन्ति।

षब्दार्थ– सः– दुर्योधन। **शङ्किता–** शङ्का से युक्त होकर। **परितः–** चारों तरफ। **परेतरान्–** स्वजनों को वा आत्मीयजनों को। **रक्षान्–** रक्षकों को। **विधाय–** नियुक्त करके। **अशङ्किताकारम्–** शङ्का से रहित आकृति को। **उपैति–** प्राप्त करता है। **क्रियापवर्गेषु–** कार्यों के समाप्त हो जाने पर। **अनुजीविसात्कृता–** अनुगामियों को प्रदान की गई। **सम्पदः–** धनादि सम्पत्तियां। **अस्य–** उस दुर्योधन की। **कृतज्ञताम्–** कृतज्ञता को। **वदन्ति–** कहती है।

अनुवाद– वह दुर्योधन युधिष्ठिर के प्रति शङ्का से युक्त होकर चारों तरफ स्वजनों को रक्षक के रूप में नियुक्त करके शङ्का से रहित हो गया है। कार्यों के समाप्त हो जाने पर अनुगामियों को दी गई सम्पत्तियां उस दुर्योधन की उपकारिता को अभिव्यक्त करती है।

संस्कृत अनुवाद– दुर्योधनस्य महनीयता वर्णयति वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति। सः दुर्योधनः भवद् पराजयः अशङ्कया सर्वः आत्मीयजनान् रक्षकान् नियुज्य अशङ्कितारहितं अभवत्। कार्यसमापनाऽन्तरे सः अमात्यतेभ्यः उपहारंस्वरूपं पुरस्कारं धनं वा दत्वा तान् प्रसन्नं करोति। भृत्याऽधीनी कृताः सम्पतयः दुर्योधस्य उपकारित्वं कथयन्ति।

समास–क्रियाऽपवर्गेषु– सप्तमी तत्पुरुष समास। **अशङ्कितः–** न शङ्कितः, नञ् तत्पुरुष समास। अशङ्किताकारम्– अशङ्कितः आकारः यस्य सः, बहुब्रीहि समास।

व्याकरण– रक्षान्– द्वितीया विभक्ति बहुवचन का रूप है। **वदन्ति–**'वद्' धातु लट्लकार प्र0 पु0 बहुवचन। **क्रियापवर्गेषु–**
सप्तमी विभक्ति बहुवचन।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– अनुप्रास अलङ्कार।

वर्णसाम्यमनुप्रासः ।।काव्यप्रकाश नवमोल्लास।।

इस पद्य में प, त, और क वर्ण की आवृत्ति कई बार हुई है। अतः अनुप्रास अलङ्कार है।

टिप्पणी–यहां पर दुर्योधन की भेदनीति का वर्णन किया गया है। कार्य के आरम्भ हो जाने पर दुर्योधन प्रचुर धन आदि उपहार स्वरूप देकर आमात्यों को उत्साहित करता है।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में हस्तिनापुर से वापस आया हुआ वनेचर युधिष्ठिर से दुर्योधन के द्वारा प्रयोग किये जाने वाले उपायो का वर्णन करते हुए कहता है कि–

अनारतं तेन पदेषु लम्भिताः
विभज्य सम्यग्विनियोगसत्क्रियाः।।
फलन्त्युपायाः परिबृंहितायती,
रुपेत्य संघर्षमिवार्थसम्पदः।।15।।

अन्वय– तेन पदेषु विभज्य सम्यग्विनियोगसत्क्रियाः लम्भिताः उपायाः संघर्षम् उपेत्य परिबृंहितायतीः अर्थसम्पदः अनारतम् फलन्ति।

शब्दार्थ– तेन– उसके द्वारा। **पदेषु**– समुचित पदों में। **विभज्य**– विभाजित करके। **लम्भिताः**– प्राप्त कराये गये। **सम्यग्विनियोगसत्क्रियाः**– सम्यग् रूप से क्रियाओं का विनियोग करके जिसका सत्कार किया गया। **उपायाः**– साम, दान, दण्ड तथा भेद राजनीति के इन चार उपायों से। **संघर्षम् उपेत्य**– स्पर्धा को प्राप्त करके। **परिबृंहतायतीः**– भविष्यकाल के लिए चारों ओर वृद्धि को अर्जित कर रहा है। **अर्थसम्पदः**– धनसम्पदाएं। **अनारतम्**– लगातार वा निरन्तर। **फलन्ति**– उत्पन्न हो रही है।

अनुवाद– वह दुर्योधन राज्य नीति को समुचित पदों में विभाजित करके तथा सम्यग् रूप से क्रियाओं का विनियोग करके आदर–सत्कार को प्राप्त कर रहा है। साम, दान, दण्ड तथा भेद राजनीति के इन चार उपायों से स्पर्धा को प्राप्त करके धन सम्पदाओं के उत्पन्न होने से निरन्तर भविष्यकाल में होने वाले वृद्धि को प्राप्त कर रहा है।

संस्कृत अनुवाद– वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति तेन दुर्योधनः उचितस्थानेषु सम्यक् रूपेण विभज्य कृत्वा समुचितस्थानप्रयोग सत्कारः सामदानदण्डभेदाः पारस्परिकस्पर्धां प्राप्य उत्तरकालाः धनसम्पतयः सततं फलन्ति।

समास– सम्यग्विनियोग– तृतीया तत्पुरुष समास।

व्याकरण– तेन– तृतीया विभक्ति एकवचन। **पदेषु**– सप्तमी विभक्ति बहुवचन।. वि+भज्+क्त्वा–ल्यप् प्रत्यय। 'वि' उपसर्गपूर्वक 'भज्' धातु में ल्यप् प्रत्यय तथा करके के योग में 'क्त्वा' प्रत्यय का प्रयोग किया गया है। **विनियोग**– वि+नि+युज्+घञ् प्रत्यय लगाने पर 'विनियोग' शब्द बना हुआ है। **उपेत्य**– उप+इण्+ल्यप् प्रत्यय। **फलन्ति**– फल्+झि ('झि'प्रत्यय को अन्ति् आदेश हो जाता है) प्रत्यय लगाने पर लट्लकार प्र0 पु0 बहुवचन का रूप बना हुआ है।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति–पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–उत्प्रेक्षा अलङ्कार।

लक्षण–सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्। (काव्यप्रकाश–दशमोल्लास)

जब उपमेय (प्रकृत) के समान वा सादृश्य, उपमान के साथ सम्भावना की जाय तो वहाँ पर उत्प्रेक्षा नामक अलङ्कार होता है।

इस पद्य के 'संघर्षमिवार्थसम्पदः' में उत्प्रेक्षा नामक अलंकार है।

टिप्पणी– इस पद्य में वनेचर शान्ति स्वभाव वाले युधिष्ठिर से कहता है कि–दुर्योधन राजनीति के चारों उपायों का अच्छी तरह से उपयोग करके अपनी आर्थिक स्थिति को मजबूत बना रहा है। महाराज (युधिष्ठिर) आप के द्वारा यदि शीघ्रोपाय नहीं किया गया तो आने वाले समय में उसके प्रशासनसत्त की नींव अच्छी तरह से दृढ़ हो जायेगी और ऐसी परिस्थिति में उस दुर्योधन पर विजय प्राप्त करना अत्यन्त दुष्कर हो जायेगा।

प्रकरण– इस श्लोक में वनेचर दुर्योधन की अर्थसमृद्धि का वर्णन करते हुए युधिष्ठिर से कहता है कि–

अनेकराजन्यरथाष्वसंकुलं
तदीयमास्थाननिकेतनाजिरम्।
नयत्ययुग्मच्छदगन्धिरार्द्रतां
भृषं नृपोपायनदन्तिना मदः।।16।।

अन्वय– नृपोपायनदन्तिनाम् अयुग्मच्छदगन्धिः मदः अनेकराजन्य रथाश्वसंकुलम् तदीयम् आस्थाननिकेतनाजिरम् भृशम् आर्द्रताम् नयति।

शब्दार्थ– **नृपोपायनदन्तिनाम्**– राजाओं के द्वारा उपहार स्वरूप दी गई हाथियों का। **अयुग्मच्छदगन्धिः**– सप्तपर्ण नामक वृक्ष के सादृश्य गन्ध वाला। **मदः**– मदजल (हाथियों के कपोल स्थल के उर्ध्व भाग से बहने वाले सुगन्धित द्रव्य को मदजल कहते हैं)। अनेकराजन्य– बहुत राजाओं के। रथाश्वसंकुलम्– रथों और घोड़ों से युक्त। तदीयम्– उस दुर्योधन के। आस्थाननिकेतनाजिरम्– सभामण्डप के आङ्गन वा प्राङ्गण को। **भृशम्**– अत्यधिक। **आर्द्रताम्**– नमी वा कीचड़ से युक्त। **नयति**– बनाया जा रहा है।

अनुवाद– राजाओं के द्वारा उपहार स्वरूप प्रदान की हाथियां तथा सप्तपर्ण नामक वृक्ष के सादृश्य गन्ध वाला मदजल के प्रवाहित होने से सुगन्धित द्रव्यों को अनेक राजाओं के रथों एवं घोड़ों से युक्त उस दुर्योधन के सभामण्डप के आङ्गन को अत्यधिक कीचड़ युक्त बनाया जा रहा है।

संस्कृत अनुवाद– दुर्योधनस्य धनसम्पदं वर्णयति वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् भो राजन् ! सभामण्डपस्य प्राङ्गणं सदैव नानाक्षत्रियाणां रथाश्वंच व्याप्तम्। नृपैः उपहारलब्धानां गजानां मदजलेन तस्य सभाप्राङ्गणं आद्रीक्रियते।

समास– **अयुग्मच्छदगन्धिः**– बहुब्रीहि समास। **रथाश्वसंकुलम्**– द्वन्द्व समास।

व्याकरण– **दन्तिनाम्**– षष्ठी विभक्ति बहुवचन। **तदीयम्**– तद्+छ प्रत्यय लगाने पर 'तदीयम्' शब्द बना हुआ है। **भृशम्**– द्वितीया विभक्ति एकवचन का रूप है। **आर्द्रताम्**– आर्द्र+तल्+टाप् प्रत्यय लगाने पर यह शब्द निष्पन्न हुआ है। **नयति**– 'नी' धातु लट्लकार प्र0 पु0 एकवचन का रूप है।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–उदात्त अलङ्कार।

उदात्तं वस्तुनः सम्पत् (काव्यप्रकाश दशमोल्लास)

जब किसी वस्तु की समृद्धि का वर्णन किया जाता है तो वहाँ पर उदात्त नामक अलङ्कार होता है।

इस पद्य में दुर्योधन की समृद्धि का वर्णन किया गया है इसलिए यहाँ पर उदात्त नामक अलङ्कार है।

टिप्पणी– इस श्लोक में केवल दुर्योधन की समृद्धि का वर्णन किया गया है।

प्रकरण– इस पद्य में वनेचर दुर्योधन के शासनकाल में प्रजाओं की समृद्धता का वर्णन करते हुए युधिष्ठिर से कहता है कि–

सुखेन लभ्या दधतः कृषीवलैरकृष्टपच्या इव सस्यसम्पदः।
वितन्वति क्षेममदेवमातृकाष्चिराय तस्मिन् कुरवष्चकासति।।17।।

अन्वय– तस्मिन् चिराय क्षेमम् वितन्वति कुरवः अदेवमातृकाः अकृष्टपच्याः इव सस्यसम्पदः दधतः कृषीवलैः सुखेन लभ्याः चकासति।

षब्दार्थ– चिराय– दीर्घकाल या लम्बे समय से। **तस्मिन्–** उस दुर्योधन के द्वारा। **क्षेमम्–** रक्षा वा कल्याण को। **वितन्वति–** करते रहने से। **अदेवमातृकाः–** वहाँ की प्रजाएं मात्र मेघ वृष्टि पर आश्रित नहीं है। **कुरवः–** कुरुदेश वा कुरुजनपद। **अकृष्टपच्याः–** बिना कर्षण वा जुताई के पकने वाली। **इव–** सादृश्य, समान। **सस्यसम्पदा–** अनाज सम्पदा को। **दधतः–** धारण करते हुए। **कृषीवलैः–** कृषकों के द्वारा। **सुखेन–** सुखपूर्वक। **लभ्याः–** प्राप्त होने वाली। **चकासति–** प्रसन्न होते हैं।

अनुवाद– उस दुर्योधन के द्वारा लम्बे समय से प्रजाओं का कल्याण करते रहने से कुरुदेश की प्रजाएं केवल वर्षा के जल पर आश्रित नहीं है तथा बिना जुताई के पकने वाली अनाज सम्पदा को धारण करते हुए सभी कृषक (किसान) सुखपूर्वक लाभ प्राप्त करते हुए प्रसन्नचित्त होते हैं।

संस्कृत अनुवाद– सः वनेचरः दुर्योधनस्यविषयक वर्णयन् कथयति यत् सः सुयोधनः स्वकीये नगरे प्रजानां मङ्गलं क्रियते। सः सेचन साधनानि विधाय कुरवः कुरुजनपदविशेषाः अकृष्टपच्या इव कृषकैः सर्वत्र धान्य समृद्धयः धारयन्त सततं शोभन्ते।

समास– कृषीवलैः– षष्ठी तत्पुरुष समास। **अदेवमातृकाः–** बहुब्रीहि समास।

व्याकरण– तस्मिन्– षष्ठी विभक्ति एकवचन। **क्षेमम्–** क्षायो मः सूत्र से क्षेमम् में 'क' प्रत्यय है। **कृषीवलैः–** कृषि+वलच् प्रत्यय लगाने पर यह शब्द बना हुआ है। **कृषीवलैः–** तृतीया विभक्ति बहुवचन का रूप हैं। **सुखेन–** तृतीया विभक्ति एकवचन। **लभ्याः–** 'लभ्' धातु में 'यत्' प्रत्यय लगाने पर यह शब्द निर्मित हुआ है।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्। (काव्यप्रकाश दशमोल्लास)

टिप्पणी– देवमातृकाः–जहां पर नदी, तालाब नहरादि के द्वारा सिंचाई के साधन न प्राप्त हो मात्र वर्षा के जल पर आश्रित हो उसे देवमातृका कहा जाता है। **अदेवमातृकाः–** जो देश वर्षा के जल पर आश्रित न हो तथा वहां पर नदी, तालाब, कूप, जलाशय, नहर आदि के द्वारा सिंचाई के साधन उपलब्ध हों तो उसे अदेवमातृका कहा जाता है।

प्रकरण– दुर्योधन दया, दान आदि गुणों के कारण अपने प्रजाओं में कीर्ति का विस्तार कर रहा है। जिसका वर्णन करते हुए वनेचर महाराज युधिष्ठिर से कहता है कि–

उदारकीर्तेरुदयं दयावतः
प्रशान्तबाधं दिशतोऽभिरक्षया।
स्वयं प्रदुग्धेऽस्य गुणैरुपस्नुता
वसूपमानस्य वसूनि मेदिनी।।18।।

अन्वय– उदारकीर्तेः दयावतः अभिरक्षया प्रशान्तबाधम् उदयम् दिशतः वसूपमानस्य अस्य गुणैः उपस्नुता मेदिनी स्वयं वसूनि प्रदुग्धे।

शब्दार्थ– उदारकीर्तेः– उदार वा महान् कीर्ति वाले। **दयावतः–** दयालु स्वभाव वाले। **अभिरक्षया–** रक्षा द्वारा। **प्रशान्तबाधम्–** उत्कृष्ट रूप से शान्त हो गया है अवरोध जिसका। **उदयम्–** उन्नति को। **दिशतः–** चारों दिशाओं में सम्पादित करते हुए। **वसूपमानस्य–** कुबेर के समान धन वाले। **अस्य–** उस दुर्योधन के। **गुणैः–** गुणों से। **उपस्नुता–** द्रवित हुई। **मेदिनी–** पृथ्वी। **स्वयं–** स्वयं ही। **वसूनि–** धन सम्पदाओं को। **प्रदुग्धे–** दोहन करती है, उत्पन्न करती है।

अनुवाद– उदार कीर्ति वाले, दयालु स्वभाव वाले तथा आत्मरक्षा हेतु नियुक्त किये गये सैनिकों द्वारा अच्छी तरह से समस्त बाधाएं शान्त हो गई है जिस दुर्योधन की। परस्पर उन्नति को चारों दिशाओं में सम्पादित करते हुए कुबेर के समान धन वाले उस दुर्योधन के गुणों से द्रवित हुई पृथिवी स्वयं ही धन सम्पदाओं को उत्पन्न करती है।

संस्कृत अनुवाद– वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति सः महद्यशास्विन् दयाला सर्वथा रक्षणेन निरुपद्रवं उन्नतिं सम्पादयतः कुबेर समतुल्यस्य अस्य दुर्योधनस्य दयादिविशेष गुणैः द्रवीभूता धरणी स्यमेव धनानि प्रसूयते।

समास– उदारकीर्तेः– उदार कीर्तिः यस्य सः बहुब्रीहि समास। **अभिरक्षया–** अव्ययीभाव समास। **वसूपमानस्य–** बहुब्रीहि और कर्मधारय समास।

व्याकरण– उदारकीर्तेः– कृ धातु में 'क्तिन' प्रत्यय लगाने पर यह शब्द बना हुआ है। **अभिरक्षया–** अभि+रक्ष्+यत्+टाप् प्रत्यय। **दिशतः–** दिश्+अम्+क्त प्रत्यय। **गुणैः–** तृतीया विभक्ति बहुवचन। **मेदिनी–** मेद्+इनि प्रत्यय। **वसूनि–** द्वितीया विभक्ति बहुवचन। **प्रदुग्धे–** प्र+दुह्+लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– अतिशयोक्ति अलङ्कार।

टिप्पणी – इस श्लोक में वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि दुर्योधन के दया दान आदि गुणों के कारण प्रजाओं में उसके यशं की वृद्धि हो रही है। राजा लोगों की वास्तविक शक्ति ही उनका खाजाना है। उसके पास धन का अभाव नहीं है। अतः उसे सामान्य रूप से जीतना अत्यन्त दुष्कर कार्य है।

प्रकरण– इस पद्य में दुर्योधन के राज व्यवहार से सैनिक लोग अधिक संतोष प्राप्त कर रहे हैं। अतः सामान्य पराक्रम के द्वारा उस पर विजय प्राप्त करना अत्यन्त कठिन ज्ञात हो रहा है। इसी का वर्णन करते हुए वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि –

महौजसो मानधना धनार्चिता

धनुर्भृतः संयति लब्धकीर्तयः।
न संहतास्तस्य न भिन्नवृत्तयः
प्रियाणि वान्छन्त्यसुभिः समीहितुम्।।19।।

अन्वय– महौजसः मानधनाः धनार्चिताः संयति लब्धकीर्तयः न संहताः न भिन्नवृत्तयः धनुर्भृतः असुभिः तस्य प्रियाणि समीहितुम् वाञ्छन्ति।

शब्दार्थ– महौजसः– महान् तेजस्वी। **मानधनाः–** स्वाभिमान है सम्पत्ति जिसका। **धनार्चिताः–** धन के द्वारा अर्चित। **संयति–** युद्ध स्थल में। **लब्धकीर्तयः–** यश को अर्जित करने वाले अर्थात् दुर्योधन। **न संहताः–** शासन के विरोध से रहित। **न भिन्नवृत्तयः–** किसी के प्रति भेदभाव का व्यवहार ने करने वाले। **धनुर्भृतः–** धनुषधारी योद्धा लोग। **असुभिः–** प्राण देकर भी। **तस्य–** उस दुर्योधन के। **प्रियाणि–**प्रिय कार्यो को। **समीहितुम्–** करने की। **वाञ्छन्ति–** इच्छा रखते हैं।

अनुवाद– महान् पराक्रमी, स्वाभिमान रूपी सम्पत्ति वाले, धन के द्वारा पूजित, रणभूमि में यश को अर्जित करने वाले, राजशासन के विरोध से रहित, किसी के प्रति भेदभाव का व्यवहार न करने वाले, धनुर्धारी योद्धा लोग अपने प्राण देकर भी उस दुर्योधन के प्रिय कार्यो को करने की इच्छा रखते हैं।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके वनेचरः दुर्योधनस्य सैन्यशक्तिः वर्णयति सः कथयति हे राजन् ! महाबलशालिः मनस्विनः पारितोषिकादिभिः सत्कृताः तस्य युद्धे परमशक्तिसम्पन्नः मानधनमेव येषां ते मानधनः न भिन्न वृत्तयः एकमत्यः धनुर्धारिणः प्राणैः अपि तस्य दुर्योधनस्य श्रेष्ठानिकार्याणि कर्तुम् इच्छन्ति। ते स्वार्थ सिद्धये न संघटिताः न परस्परं विरोधिनः सन्ति।

समास– महौजसः– महान् च असौ ओजः कर्मधारय समास। **धनार्चितः–** तृतीया तत्पुरुष समास।

व्याकरण– धनार्चिताः– धन+अर्च+इण्+क्त+टाप् प्रत्यय। **लब्धः–** लभ्+क्त प्रत्यय। **असुभिः–** तृतीया विभक्ति बहुवचन। **समीहितुम–** सम्+इह्+तुमुन प्रत्यय। **वाञ्छन्ति–** लट्लकार प्रथम पुरुष बहुवचन।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– संसृष्टि अलङ्कार।

लक्षण– सेष्टा संसृष्टिरेतेषां भेदेन यदिह स्थितिः ।।काव्यप्रकाशदशोल्लास।।

जब दो या दो से अधिक अलङ्कारों का वर्णन एक साथ किया जाय तो वहाँ पर संसृष्टि नामक अलंकार होता है।

प्रकरण– इस श्लोक में वनेचर युधिष्ठिर से वर्णन करते हुए कहता है कि दुर्योधन अपने गुप्तचरों के द्वारा आपके सम्पूर्ण कार्यों के विषय में जानकारी प्राप्त कर रहा है–

महीभृतां सच्चरितैष्चरैः क्रियाः
स वेद निःषेषमषेषितक्रियः।
महोदयैस्तस्य हितानुबन्धिभिः
प्रतीयते धातुरिवेहितं फलैः।।20।।

अन्वय–अशेषितक्रियाः स सच्चरितैः चरैः महीभृताम् क्रियाः निःशेषम् वेद धातुः इव तस्य ईहितम् महोदयैः हितानुबन्धिभिः फलैः प्रतीयते।

षब्दार्थ– अषेषितक्रियाः– कार्यों को शेष न छोड़ने वाला। **स**–वह दुर्योधन। **सच्चरितैः**– विशुद्ध चरित्र वाला। **चरैः**– गुप्तचरों द्वारा। **महीभृताम् क्रियाः**– राजाओं के कार्यों को। **निःषेषम् वेद**– सम्पूर्ण रूप से जानता है। **धातुः**– विधाता। **इव**– समान। **तस्य**–उसके। **ईहितम्**– श्रेष्ठकार्य को। **महोदयैः**– समृद्ध करने वाले। **हितानुबन्धिभिः**– बन्धुओं के हितैषी परिणाम। **फलैः**– फलों द्वारा। **प्रतीयते**– प्रतीत होते हैं।

अनुवाद–कार्यों को शेष न छोड़ने वाला अर्थात् सभी कार्यों को करने वाला वह दुर्योधन, अत्यन्त शुद्ध चरित्र वाले गुप्तचरों के माध्यम से, राजाओं के कार्यों को अच्छी तरह से जानता है। ब्रह्मा या विधाता के समान, उस दुर्योधन के इष्टकार्य को समृद्ध करने वाले, बन्धुओं के हितैषी परिणाम, केवल फलों द्वारा जान सकते हैं।

संस्कृत अनुवाद– वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति दुर्योधनस्य कार्यशैली वर्णयन् कथयति सः कुरुदेशवासी सुयोधनः शुद्धचरितैः गुप्तचरैः सामन्तभूपतीनां कर्माणि निखिलं जानाति ईश्वरस्य इव तस्य दुर्योधनस्य इच्छानुरूपं कार्यं अभीष्टं अत्यन्तवृद्धिभिः फलैः इव ज्ञायते।

समास– अशेषित क्रियाः– न शेषिताः क्रिया यस्य सः, बहुब्रीहि समास।

व्याकरण– महीभृतां– मही+भृ+क्विप् प्रत्यय, षष्ठी विभक्ति बहुवचन। **प्रतीयते**– लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन। **धातुः**– 'धा' धातु में 'तृच्' प्रत्यय लगाने से बना हुआ है। यह पञ्चमी और षष्ठी विभक्ति के एकवचन का रूप है।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– उपमा अलङ्कार।

यहाँ पर वनेचर ने दुर्योधन के कार्यों की उपमा विधाता दी है। इसलिए उपमा अलङ्कार है।

टिप्पणी– राजा दुर्योधन के गुप्तचर अधिक विश्वसनीय थे। वह अन्य राजाओं के द्वारा किये गये कार्यों का सबसे पहले गुप्तचरों के द्वारा जान लेता था। फिर अपने कार्यों की जानकारी उन राजाओं को देता था।

प्रकरण– इस श्लोक में वनेचर युधिष्ठिर से दुर्योधन की शक्तियों का वर्णन करते हुए कहता है कि–

न तेन सज्यं क्वचिदुद्यतं धनुः
कृतं न वा कोपविजिह्ममाननम्।
गुणानुरागेण षिरोभिरुह्यते
नराधिपैर्माल्यमिवास्य षासनम्।।21।।

अन्वय–तेन क्वचित् धनुः सज्यं न उद्यतम् आननं वा कोपविजिह्मम् न कृतम् नराधिपैः अस्य शासनम् गुणानुरागेण माल्यम् इव शिरोभिः उह्यते।

षब्दार्थ– तेन–उस दुर्योधन के द्वारा। **क्वचित्**–कभी। **धनुः**–धनुष की। **सज्यं**–प्रत्यञ्चा। **न उद्यतम्**– नहीं चढ़ाया गया। **आननं**–मुख को। **कोपविजिह्मम्**– क्रोध से कुटिल। **न कृतम्**– नहीं किया। **अस्य**–उस दुर्योधन के। **षासनम्**–आज्ञा वा आदेश। **गुणानुरागेण**–गुणों के अनुराग से। **नराधिपैः**– राजागण। **माल्यम् इव**–माला के समान। **षिरोभिः**–सिर से। **उह्यते**– धारण करते थे।

अनुवाद–उस दुर्योधन के द्धारा कभी धनुष की प्रत्यञ्चा नहीं चढ़ाई गई। उसने क्रोध से अपने मुख को कभी कृटिल नहीं बनाया। उसके गुणाों के अनुराग से सभी राजा लोग उसके आज्ञा को माला के समान सिर पर धारण करते थे।

संस्कृत अनुवाद– युधिष्ठिरं प्रति वनेचरः कथयति तेन दुर्योधनेन कुत्रापि धनुः प्रत्ञ्चया न उत्थापितं न कुत्रापि वधनाय व्यापारितं मुखं क्रोधेन कुटिलं न कृतं। दयादानादि गुण प्रेरणयाः सामन्त प्रजापतिभिः तस्य दुर्योधनस्य आदेशं माल्यमिव शिरोभिः धार्यते।

समास– **कोपविजिह्मम्**–कोपेन विजिह्मम्, तृतीया तत्पुरुष समास। **गुणानुरागेण**–गुणेषु अनुरागः तेन, सप्तमी तत्पुरुष समास।

व्याकरण–तेन–तृतीया विभक्ति एकवचन। **आननं**–द्वितीया विभक्ति एकवचन। **कृतम्**–'कृ' धातु में 'क्त' प्रत्यय। **षासनम्**– 'शास्' धातु में 'ल्युट्' प्रत्यय। **उह्यते**– 'वह्' धातु लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–उपमा अलङ्कार।

दुर्योधन के आदेश की उपमा सिर से धारण करने वाले माला से की गयी है। अतः यहाँ पर उपमा अलङ्कार है।

टिप्पणी–राजा दुर्योधन के गुणों से अधीनस्थ राजा लोग अधिक प्रभावित थे। समीप में रहने वाले राजा उसकी आज्ञा का पालन, सिर पर धारण की गयी माला के समान करते थे।

प्रकरण–प्रस्तुत श्लोक में वनवासी वनेचर युधिष्ठिर से राजा दुर्योधन की राजनैतिक कुशलता और उसके धार्मिक आस्था का वर्णन करते हुए कहता है कि–

स यौवराज्ये नवयौवनोद्धतं
निधाय दुःषासनमिद्धषासनः।
मखेष्वखिन्नोऽनुमतः पुरोधसा
धिनोति हव्येन हिरण्यरेतसम्।।22।।

अन्वय– इद्धषासनः सः नवयौवनोद्धतम् दुःषासनम् यौवराज्ये निधाय पुरोधसा अनुमतः अखिन्नः मखेषु हव्येन हिरण्यरेतसम् धिनोति।

षब्दार्थ––इद्धषासनः–जीवन पर्यन्त शासन करने वाला **सः**–वह दुर्योधन। **नवयौवनोद्धतम्**–नवीन युवावस्था से युक्त होने वाले। **दुःषासनम्**– भाई दुःशासन को। **यौवराज्ये**–युवराज्य के पद पर। **निधाय**–नियुक्त करके। **पुरोधसा**– पुरोहित। **अनुमतः**–आज्ञा से। **अखिन्नः**– अधिक प्रसन्न होकर। **मखेषु**– यज्ञों में। **हव्येन**–हवन द्वारा **हिरण्यरेतसम्**–अग्निदेव को। **धिनोति**–खुश करता है।

अनुवाद–लम्बे समय तक शासन करने वाला वह दुर्योधन, नवीन युवावस्था से युक्त होने वाले छोटे भाई दुःशासन को राजा के पद पर नियुक्त करके, स्वयं अपने पुरोहित की आज्ञा पाकर अधिक प्रसन्न होता है और यज्ञकुण्ड में हवन डालकर अग्निदेवता को प्रसन्नचित्त करता है।

संस्कृत अनुवाद– दुर्योधनस्य धार्मिककार्याणि वर्णयन् वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति, सः दुर्योधनः अभिनव यौवनेन उद्धतं दुःशासनम् युवराजपदे नियुज्य स्वयंपुरोहितेन अनुमतः प्राप्य सः यज्ञेषु हविषा अग्निदेवं प्रसन्नांऽकरोत्।

समास– इद्धषासनः– इद्धं शासनं यस्य सः, बहुब्रीहि समास। **यौवराज्ये–** षष्ठी और सप्तमी तत्पुरुष समास **अखिन्नः–** न खिन्नः, नञ् तत्पुरुष समास।

व्याकरण– दुःषासनम्– द्वितीया विभक्ति एकवचन। **हव्येन–** तृतीया विभक्ति एकवचन। **मखेषु–** सप्तमी विभक्ति एकवचन। **निधाय–** नि+'धा' धातु क्त्वा/ल्यप् प्रत्यय। **धिनोति–**परस्मैपदी लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– अनुप्रास अलङ्कार।

य, व, न, म अक्षर की आवृत्ति अनेक बार हुई है। इसलिए यहाँ पर अनुप्रास अलङ्कार है।

टिप्पणी– इस पद्य में सुयोधन के धार्मिक प्रवृत्ति का वर्णन किया गया है। वह राज्य संचालन की जिम्मेदारी अपने छोटे भाई को दे देता है और स्वयं यज्ञ करने की तैयारी करने लगता है।

प्रकरण– इस पद्य में वनेचर दुर्योधन की शङ्का तथा उसके राज्य विस्तार का वर्णन कर रहा है–

प्रलीनभूपालमपि स्थिरायति,
प्रषासदावारिधि मण्डलं भुवः।
स चिन्तयत्यभियस्त्वदेष्यती
रहोदुरन्ता बलवद्विरोधिता।।23।।

अन्वय–प्रलीनभूपालम् स्थिरायति भुवः मण्डलम् आवारिधि प्रशासद् सः त्वदेष्यतीः भियः चिन्तयति एव अहो बलवद्विरोधिता दुरन्ता।

षब्दार्थ– **प्रलीन–** शत्रुओं से रहित । **सः–**वह (दुर्योधन)। **भूपालम्–**राजा। **स्थिरायति–**चिरकाल से। **आवारिधि–**समुद्र तक फैली हुई। **भुवः मण्डलम् –**पृथिवी मण्डल पर। **प्रषासद् अपि–**शासन करता हुआ भी। **त्वदेष्यतीः–**तुम्हारे आने वाले। **भियः–**भय से। **चिन्तयति एव–**चिन्ता ही करता है। **अहो–**अरे!। **बलवद्विरोधिता–**बलवान शत्रु से विरोध करना। **दुरन्ता–**अन्त में पीड़ा पुहँचाने वाला होता है।

अनुवाद– प्रस्तुत श्लोक में वनवासी वनेचर महाराज युधिष्ठिर से कहता है कि– हे महाराज ! वह दुर्योधन आप जैसे शत्रुओं से रहित होकर, चिरकाल से समुद्र तक फैली हुई पृथिवी मण्डल पर शासन करता हुआ भी तुम्हारे भय से चिन्तित रहता है। अरे बलवान लोगों के साथ विरोध करना अन्तिम समय में दुःखदायी होता है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति सः दुर्योधनः समुद्रपर्यन्तम् निष्कण्टं समृद्ध राज्यमनुशास्तिः तथापि सः दुर्योधनः भवद् सकाशात् प्राप्स्यमानं भियः विचारयति एवं यस्य सत्यं बलवता शत्रुणा सह विरोधभावः फलैः दुःखप्रद भवति।

अहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता । (यह सूक्तिपरक कथन है)

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

सामान्यं वा विषेषो वा तदन्येन समर्थ्यते।
यत्तु सोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येणतरेण वा।। (काव्यप्रकाश दशमोल्लास)

समास– आवारिधि– वारिभ्यः पर्यन्तम् इति, अव्ययीभाव समास। **बलवद्विरोधिता–** बलवद्भिः विरोधिता, तृतीया तत्पुरुष समास।

व्याकरण– भूपालम्– द्वितीया विभक्ति एकवचन। **अहो–** सम्बोधन वाचक। **चिन्तयति–** 'चिन्त' धातु लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन। **विरोधिता–** वि+रुध्+णिनि+तल्+टाप् प्रत्यय।

टिप्पणी– दुर्योधन वीर तथा पराक्रमी राजा था। किन्तु महाराज युधिष्ठिर अपना राज्य वापस पाने के लिए दुर्योधन पर कभी भी आक्रमण कर सकते थे। इसी कारण सुयोधन धर्मपुत्र युधिष्ठिर के डर से सदा चिन्तित रहता था।

प्रकरण– इस श्लोक में वनेचर दुर्योधन के भय का वर्णन करते हुए युधिष्ठिर से कहता है कि–

कथाप्रसङ्गेन जनैरुदाहृताद्
अनुस्मृताखण्डलसूनुविक्रमः।
तवाभिधानाद् व्यथते नताननः
सः दुःसहान्मन्त्रपदादिवोरगः।।24।।

अन्वय– जनैः कथाप्रसङ्गेन उदाहृतात् दुःसहात् तव अभिधानात् अनुस्मृताखण्डल सूनुविक्रमः नताननः सः मन्त्रपदात् उरगः इव व्यथते।

षब्दार्थ– जनैः–लोगों के द्वारा। **कथाप्रसङ्गेन**–वार्तालाप के प्रसङ्ग से। **उदाहृतात्**–उदाहरण स्वरूप। **तव अभिधानात्**– तुम्हारे नाम को सुनकर। **अनुस्मृताखण्डल सूनुविक्रमः**–अत्यधिक पराक्रमशाली इन्द्र पुत्र अर्जुन का स्मरण करके। **सः**–वह, उस दुर्योधन। **नताननः इव** –मुख नतमस्तक उसी प्रकार। **यथा–** जैसे **दुःसहात्–** दुःसहनीय। **मन्त्रपदात्**– मन्त्र के प्रभाव से। **उरगः**– वासुकि नामक सर्प। **व्यथते–** व्यथित होकर झुक जाता है।

अनुवाद– दूत वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि हे महाराज ! लोगों द्वारा बातचीत के प्रसङ्ग में उदाहरण स्वरूप तुम्हारे नाम को सुनकर, अत्यधिक पराक्रमशाली इन्द्रपुत्र अर्जुन का स्मरण करके, उस दुर्योधन का मुख उसी प्रकार से नतमस्तक हो जाता है। जिस प्रकार विष निवारक मन्त्र के प्रभाव से वासुकि नामक सर्प अपने फन को नीचा कर लेता है।

संस्कृत अनुवाद– वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति भो राजन् ! कथायाः प्रसङ्गेन लोकैः उदाहृतात् भवतः नामधेयात् स्मृतो अर्जुनस्यपराक्रमो दुर्योधनः तथैव व्यथामाप्नोति यथा विषवैद्येषु श्रेष्ठजनैः उच्चारितात् वासुकि नाम्नः सर्पः मंन्त्रप्रयोगात् नम्रोभवति तथैव सः दुर्योधनः युधिष्ठिरात् भयाद् नतमस्तकम् भवति।
यहाँ पर दुर्योधन' की उपमा 'उरग' से दी गयी है।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति— पाञ्चाली रीति।

गुण— प्रसाद गुण।

अलङ्कार—उपमा अलङ्कार।

समास— कथाप्रसङ्गेन— कथायां प्रसङ्गेन, षष्ठी तत्पुरुष समास।

व्याकरण— जनैः— तृतीया विभक्ति बहुवचन। **उदाहृतात्**—उत्+आ+हृ+क्त प्रत्यय, पञ्चमी विभक्ति एकवचन। **विक्रमः**— वि+क्रम—अच् प्रत्यय। **अनुस्मृतः**— अनु+स्म्+क्त प्रत्यय। **व्यथते**—आत्मनेपदी लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन।

टिप्पणी— महाकवि भारवि को मंत्र आदि का ज्ञान था। जिसका परिचय इस श्लोक में प्राप्त होता है।

प्रकरण— इस श्लोक में वनेचर दुर्योधन विषयक सारा समाचार बताने के पश्चात् युधिष्ठिर से कहता है कि महाराज उस कुटिल राजा के साथ सन्धि अवश्य करना चाहिए—

तदाषु कर्तुं त्वयि जिह्ममुद्यते
विधीयतां तत्र विधेयमुत्तरम्।
परप्रणीतानि वचांसि चिन्वतां
प्रवृत्तिसाराः खलु मादृषां गिरः।।25।।

अन्वय— तत् त्वयि जिह्मम् कर्तुम् उद्यते तत्र विधेयम् उत्तरम् आशु विधीयताम् परप्रणीतानि वचांसि चिन्वताम् मादृशां प्रवृत्तिसाराः खलु।

षब्दार्थ— तत्— इसलिए (वह दुर्योधन)। **त्वयि**— तुम्हारे प्रति। **जिह्मम्**— कुटिल। **कर्तुम्**— कर्म करने के लिए। **उद्यते**— तत्पर है। **तत्र**— उस दुर्योधन के प्रति। **विधेयम्**— करने योग्य। **उत्तरम्**— सन्धि या प्रतिकार को। **आषु**— शीघ्र। **विधीयताम्**— कीजिए। **परप्रणीतानि**— दूसरों के द्वारा कहे गये। **वचांसि**— वचनों को। **चिन्वताम्**— एकत्र करके। **खलु**— निश्चय ही। **मादृशां**— मुझ जैसे वनेचर की। **गिरः**— वाणी। **प्रवृत्तिसाराः**— कहने के लिए प्रेरित कर रही है।

अनुवाद— प्रस्तुत श्लोक में वनेचर युधिष्ठिर से कहता है कि हे महाराज वह दुष्ट दुर्योधन तुम्हारे प्रति कुटिल व्यवहार करने के लिए तैयार है। इसलिए आप उस दुर्योधन के प्रति, करने योग्य कोई न कोई उपाय शीघ्र कीजिए। क्योंकि उस दुर्योधन के प्रति दूसरों के द्वारा कहे गये वचनों को एकत्र करके, मुझ जैसे वनेचर की वाणी आपके समक्ष कहने के लिए बाध्य कर रही है।

संस्कृत अनुवाद— वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति कथयति यस्य दुर्योधनः भवति कपटं विधातुम् उद्यते तत्र दुर्योधनस्य विषये भवतः शीघ्रं उपायं करणीयम्। मादृशां जनानां वचनानि तु श्रुतवार्ताकथनमात्र साराः भवन्ति।

छन्द— वंशस्थ छन्द।

रस— वीर रस।

रीति— पाञ्चाली रीति।

गुण— प्रसाद गुण।

अलङ्कार— अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

समास— प्रवृत्ति साराः— प्रवृत्तिः सारा यस्य सः, बहुब्रीहि समास।

व्याकरण– उद्यते–लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन। **कर्तुम्**– तुमुन प्रत्यय। **त्वयि**– सप्तमी विभक्ति एकवचन। **वचांसि**– प्रथमा और द्वितीया विभक्ति बहुवचन नपुंसकलिङ्ग।

टिप्पणी– यहाँ पर वनेचर दूसरों के द्वारा कही गयी बात को अपने स्वामी युधिष्ठिर से यथावत कहता है। ऐसा कहकर वह अपने स्वामी की प्रेरणाशक्ति को बढ़ाना चाहता है।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में वनेचर के मुख से दुर्योधन विषयक पूरा समाचार सुनने के बाद युधिष्ठिर द्रौपदी के भवन में जाकर अपने भाईयों से वार्तालाप करता है। जिसका वर्णन इस पद्य में किया गया है –

इतीरयित्वा गिरमात्तसत्क्रिये
गतेऽथ पत्यौ वनसन्निवासिनाम्।
प्रविष्य कृष्णासदनं महीभुजा
तदाचचक्षेऽनुजसन्निधौ वचः।।26।।

अन्वय– वनसन्निवासिनां पत्यौ इति गिरम् ईरयित्वा आत्तसत्क्रिये गते अथ महीभुजा कृष्णासदनम् प्रविश्य अनुजसन्निधौ तद् वचः आचचक्षे।

शब्दार्थ– पत्यौ– स्वामी। **वनसन्निवासिनां**– वनेचरों की। **इति**–इस प्रकार। **गिरम्**– वाणी को। **ईरयित्वा**– जानकर। **आत्तसत्क्रिये**– अधिक सम्मान किया। **अथ**– इसके बाद। **गते**–वनेचर के चले जाने पर। **महीभुजा**– महाराज युधिष्ठिर। **कृष्णासदनम्**–द्रौपदी के भवन में। **प्रविश्य**– प्रवेश करके। **अनुजसन्निधौ**– भाईयों के (भीम, अर्जुन, नकुल–सहदेव) समाने। **तद्**– वह (उस वनेचर के)। **वचः**– वचन। **आचचक्षे**– कहा।

अनुवाद– राजा युधिष्ठिर वन में निवास करने वाले वनेचर की वाणी को सुनकर, उसका अच्छी तरह से सम्मान किया। इसके पश्चात् जब वनेचर चला जाता है तब महाराज युधिष्ठिर द्रौपदी के भवन में जाकर अपने छोटे भाईयों के समाने वनेचर के द्वारा कहीं हुई समस्त बातों को बताया।

संस्कृत अनुवाद– वनेचरः राज्ञः समाचारं कथयित्वा पुरस्कारं च गृहीत्वा स्वगृहं अगच्छत्। तर्हि युधिष्ठिरः द्रौपदी भवनं प्रविश्य भीमार्जुनादीनां भ्रातृणां समक्षे वनेचरः कथनं उवाच आरम्भः क्रियते।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–अनुप्रास अलङ्कार।

समास– कृष्णासदनम्– कृष्णायाः सदनं, षष्ठी तत्पुरुष समास। **अनुजसन्निधौ–अनुजानां सन्निधौ,** षष्ठी तत्पुरुष समास।

व्याकरण– पत्यौ– सप्तमी विभक्ति एकवचन। **प्रविश्य**– प्र+विश्+क्त्वा/ल्यप् प्रत्यय। **ईरयित्वा**– ईर्+णिच्+क्त्वा प्रत्यय। **गिरम्**– द्वितीया विभक्ति एकवचन।

टिप्पणी– यहाँ पर युधिष्ठिर ने वनेचर को पुरस्कार देकर सम्मानित किया था। क्योंकि गुप्तचरों को खुश रखना राजा का धर्म हैं।

प्रकरण– वनेचर द्वारा कहे गये दुर्योधन विषयक पूरा समाचार युधिष्ठिर के मुख से सुनकर द्रौपदी क्रोधित होकर शत्रुओं का विनाश करने के लिए युधिष्ठिर पर गुस्सा करते हुए कहती हैं कि –

निषम्य सिद्धिं द्विषतामपाकृतीस्ततस्त्या विनियन्तुमक्षमा।
नृपस्य मन्युव्यवसायदीपिनीरुदाजहार द्रुपदात्मजा गिरः।।27।।

अन्वय– ततः द्रुपदात्मजा द्विषताम् सिद्धिम् निशम्य ततस्त्याः अपाकृतीः विनियन्तुम् अक्षमा नृपस्य मन्युव्यवसायदीपिनी गिरः उदाजहार।

शब्दार्थ– ततः– इसके पश्चात्। **द्रुपदात्मजा–** द्रुपद की पुत्री द्रौपदी। **द्विषताम् सिद्धिम्–** शत्रूओं की सफलता को। **निषम्य–** सुनकर। **ततस्त्याः–** उन शत्रुओं से मिलने वाले। **अपाकृतीः–** अपमान को। **विनियन्तुम्–** रोकने के लिए। **अक्षमा–** असमर्थ। **नृपस्य–** राजा युधिष्ठिर के। **मन्यु–** क्रोध। **व्यवसायदीपिनी–** व्यवसाय या उद्योग को बढ़ाने के लिए। **गिरः–** वचन। **उदाजहार–** कहा।

अनुवाद– दुर्योधन के बारे में वनेचर के द्वारा कहने के बाद, दुष्ट दुराचारी (सुयोधन) विषयक समाचार को युधिष्ठिर के मुख से सुनने के पश्चात् महाराज द्रुप की पुत्री द्रौपदी कहती है कि– मैंने तुम्हारे मुख से शत्रुओं की सफलता को सुनकर, उन शत्रुओं से मिलने वाले तिरस्कार को रोकने में असमर्थ युधिष्ठिर, आपके क्रोध और व्यवसाय को बढ़ाने के लिए वचन कहना प्रारम्भ कर रहीं हूँ।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति सा द्रौपदी युधिष्ठिरस्य मुखात् द्रौपदीभवने प्रविश्य अनुजानां प्रत्यक्षे शत्रुणां धनधान्यसमृद्धिं श्रुत्वा तेभ्यः शत्रुभ्यः प्राप्ता अपमानं अवरुद्धे असमर्था सा द्रौपदी युधिष्ठिरस्य क्रोधात् प्रादुर्भूतवचः उवाच।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– काव्यलिङ्ग अलङ्कार।

समास– द्रुपदात्मजा– द्रुपदस्य आत्मजा, षष्ठी तत्पुरुष समास। **अक्षमा–** न क्षमा, नञ् तत्पुरुष समास

व्याकरण– नृपस्य– षष्ठी विभक्ति एकवचन। **विनियन्तुम्–** वि+नी+यत्+तुमुन प्रत्यय। **द्विषताम्–** षष्ठी विभक्ति बहुवचन। **निषम्य–** नि+शम्+ल्यप् प्रत्यय।

टिप्पणी– दुर्योधन की समृद्धि को सुनते ही द्रौपदी का क्रोध ज्वालामुखी की भांति प्रस्फुटित हुआ है।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठिर को अपमानित नहीं करना चाहती है। परन्तु भरी सभा में दुर्योधन के द्वारा जो उसका अपमान हुआ था। इसी कारण उसकी असहनीय मनोव्यथाएं युधिष्ठिर के प्रति कटुवचन कहने के लिए बाध्य कर रही है। जिसका वर्णन इस पद्य में किया गया है–

भवादृशेषु प्रमदाजनोदितं
भवत्यधिक्षेप इवानुषासनम्।
तथापि वक्तुं व्यवसाययन्ति
मां निरस्तनारीसमया दुराधयः।।28।।

अन्वय–भवादृशेषु प्रमदाजनोदितम् अनुशासनम् अधिक्षेपः इव भवति। तथापि निरस्तनारीसमयाः दुराधयः माम् वक्तुम् व्यवसाययन्ति।

शब्दार्थ– भवादृशेषु– आप जैसे महापुरुषों के विषय में। **प्रमदाजनोदितम्**–स्त्री के द्वारा दिया गया। **अनुशासनम्–** उपदेश। **अधिक्षेपः इव**–तिरस्कार या अपमान के समान। **भवति**– होता/लगता है। **तथापि–**

फिर भी। **निरस्तनारीसमयाः**–नारी की मर्यादा को त्याग करके। **माम्**– मुझ द्रौपदी को। **दुराधयः** – मानसिक मनोव्यथाएं। **वक्तुम्**–कहने के लिए। **व्यवसाययन्ति**–प्रेरित कर रही हैं।

अनुवाद– हे महाराज ! आप लोग स्त्री की मर्यादा को न समझने वाले, मुझ द्रौपदी के द्वारा दिया गया उपदेश तुम जैसे महापुरुषों के लिए अपमान के समान लगता है। मैं आप पर कटाक्ष वचन नहीं करना चाहती हूँ। फिर भी नारी की मर्यादा को त्याग करके, मेरा अत्यधिक असहनीय दुःख कुछ कहने के लिए मुझे बार–बार उत्साहित कर रहा है।

संस्कृत अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति वर्णयति कथयति हे राजन् ! भवादृशेषु स्त्रीजनः उक्तं परमोपदेशः अपमानजनकम् इव भवति। तथापि मयाभवताम् किमपिऽग्रे न वक्तव्यम् तथापि स्त्रीसदाचाराः कारेण मनोव्यथा मां द्रौपदी वक्तुं प्रेरयन्ति।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–काव्यलिङ्ग अलङ्कार।

काव्यलिङ्ग का लक्षण– **काव्यलिङ्ग हेतोर्वाक्यपदार्थता।** (काव्यप्रकाश)

समास– प्रमदाजनोदितम्– प्रमदा जनेन उदितम्, तृतीया तत्पुरुष समास। **निरस्तनारीसमयाः**– निरस्तः नारी समयः यैः ताः, बहुब्रीहि समास (नारी की मर्यादा का त्याग किया है जिसने–द्रौपदी)।

व्याकरण– अनुशासनम्– अनु+शास्+ल्युट् प्रत्यय। **वक्तुम्**– 'वच्'धातु+तुमुन प्रत्यय। **अधिक्षेपः**– अधि+क्षिप्+घञ् प्रत्यय। **प्रमदा**– प्र+मद्+अच्+टाप् प्रत्यय। **भवति**– भू धातु, तिप् प्रत्यय, लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन। **माम्**– अस्मद् का सर्वनाम रूप, द्वितीया विभक्ति एकवचन।

टिप्पणी– जब महाराज युधिष्ठिर राजभवन में जाकर द्रौपदी से शत्रु दुर्योधन की कुशलता और उसकी राज्य समृद्धि के विषय में बताते है तो रानी द्रौपदी उदास हो जाती है। क्योंकि भरी सभा में किये गये अपमान को द्रौपदी याद करके अधिक दुःख महसूस करती है।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में युधिष्ठिर पर क्रोध करती हुई द्रौपदी कहती है कि पूर्वजों से मिली हुई राज लक्ष्मी को आपने जान करके राज्य को त्याग दिया है।

अखण्डमाखण्डलतुल्यधामभिः
चिरं धृता भूपतिभिः स्ववंषजैः।
त्वयात्महस्तेन मही मदच्युता
मतङ्गजेन स्त्रगिवापवर्जिता।।29।।

अन्वय– आखण्डलतुल्यधामभिः स्ववंशजैः भूपतिभिः चिरम् अखण्डम् धृता मही त्वया मदच्युता मतङ्गजेन स्रग् इव आत्महस्तेन अपवर्जिता।

षब्दार्थ– आखण्डलतुल्यधामभिः– इन्द्र के समान पराक्रमी **स्ववंशजैः**–अपने कुल में उत्पन्न। **भूपतिभिः**–राजाओं के द्वारा। **चिरम्**–चिरकाल तक। **अखण्डम्**–निरन्तर। **धृता**–धारण की गयी। **मही**–पृथिवी या राजलक्ष्मी। **त्वया**–आपने। **मदच्युता**–मदोन्मत्त। **मतंगजेन**–हाथी के द्वारा। **स्रग् इव** –माला के समान। **आत्महस्तेन**–अपने हाथों से। **अपवर्जिता**–त्याग दिया है।

अनुवाद– इन्द्र के समान पराक्रमी, अपने कुल के राजाओं ने अधिक समय तक समुद्र के किनारे तक फैली हुई पृथिवी को अपने अधीन रखा। परन्तु तुमने अपने हाथों से इस पथिवी को उसी प्रकार त्याग दिया है। जिस प्रकार मद से उन्मत हाथी अपने गले से माला को निकाल कर फेंक देता है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति सक्रोधेन कथयति भो राजन् ! पृथिवीं चिरंकालपर्यन्तम् अखण्डरूपेण संरक्षिता। तथापि त्वया युधिष्ठिरेण मदगजेन पुष्पमाला इव स्वहस्तेन अपवर्जिता।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– उपमा अलङ्कार।

यहाँ द्रौपदी ने '**मदच्युता मतंगजेन**' शब्द से उपमा महाराज युधिष्ठिर की दी है। जिस प्रकार मद से उन्मत हाथी अपने सूड़ से माला को निकालकर फेंक देता है। उसी प्रकार आपने राजलक्ष्मी को अपने हाथों से निकालकर फेंक दिया है। '**धृता स्रग् इव च्युता**' पृथिवी (राजलक्ष्मी) की उपमा माला से की गई है।

समास– स्ववंशजैः– स्ववशे जाताः तैः, सप्तमी तत्पुरुष समास। **भूपतिः–**भूवः पतिः, षष्ठी तत्पुरुष समास। **आत्महस्तेन–**आत्म एव हस्तेन, कर्मधारय समास।

व्याकरण– भूपतिभिः– तृतीया विभक्ति, बहुवचन। **धृता–**धृ' धातु+'क्त'+टाप् प्रत्यय **त्वया**–युष्मद् का सर्वनाम रूप तृतीया विभक्ति एकवचन। **हस्तेन–** तृतीया विभक्ति एकवचन। **मही–**मह्+अच्+ ङीप् प्रत्यय।

टिप्पणी– इस श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि हे महाराज ! जो राज्य हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त हुआ था। उस राज्य को आप पुनः प्राप्त करने की चेष्टा कीजिए।

प्रकरण–इस पद्य में द्रौपदी युधिष्ठिर को दुर्योधन के प्रति युद्ध करने के लिए प्रेरित कर रही है–

व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं
भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।
प्रविष्य हि ध्नन्ति षठास्तथाविधान्
ऽसंवृताङ्गान्निषिता इवेषवः।।30।।

अन्वय– ते मूढधियः पराभवम् व्रजन्ति ये मायाविषु न मायिनः भवन्ति। शठाः तथाविधान् असंवृताङ्गान् निशिताः इषवः प्रविश्य ध्नन्ति हि।

षब्दार्थ– ते– तुम्हारे जैसे। **मूढधियः–** मूढबुद्धि वाले या अविवेकी। **पराभवम्–** पराजय या हार। **व्रजन्ति–** प्राप्त होते हैं। **ये–** जो। **मायाविषु–** मायावियों के विषय में। **मायिनः–** मायावी। **न–** नहीं। **भवन्ति–** होते हैं। **तथाविधान्–** उसी प्रकार। **षठाः–** धूर्त के। **असंवृताङ्गान्–** कवच रहित शरीर को। **निषिताः–** नुकीला। **इषवः–** बाण। **प्रविष्य–** प्रवेश करके। **हि–** निश्चय ही। **ध्नन्ति–** मार देता है।

अनुवाद– जो लोग मायावियों के विषय में मायावी नहीं होते हैं। वे अविवेकी लोग निश्चय ही पराजय को प्राप्त करते हैं। अर्थात् अविवेकी मनुष्य युद्ध में हमेशा पराजित होते हैं, यदि आप धूर्तों के साथ धूर्त बनकर व्यवहार नहीं करते हो तो जिस प्रकार रक्षा कवच आदि से रहित शरीर में तीव्र नोंक वाला बाण

पहुँच कर उस शरीर को मार देता है। उसी बाण के समान उस छल कपटी दुर्योधन के साथ तुम्हे छल कपट का व्यवहार अवश्य करना चाहिए।

संस्कृत अनुवाद– प्रस्तुत श्लोके द्रौपदी युधिष्ठिरात् कथयति यत् भो राजन् ! दुष्टेन सह शठे शाठ्यं समाचरेयुः। ये जनाः शठतां न कुर्वन्ति ते जनाः पराजयं लभन्ते। तीक्ष्णाः बाणः यथा अनारक्षितेषु शरीराङ्गेषु अन्तःकरणप्रवेशं कृत्वा विनाशयन्ति। तथैव भवतः कुटिल दुर्योधनस्य विनाशाय शीघ्रं उद्यते।

व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः। यह सूक्तिपरक वाक्य है।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– उपमा अलङ्कार।

समास– मूढधियः– मूढा धीः येषां ते, बहुब्रीहि समास। **मायाविषु–** षष्ठी तत्पुरुष समास।

व्याकरण– पराभवम्– द्वितीया विभक्ति एकवचन। **व्रजन्ति–** 'व्रज' धातु लट्लकार प्रथम पुरुष बहुवचन। **भवन्ति–** 'भू' धातु लट्लकार प्रथम पुरुष बहुवचन। **ध्नन्ति–**'हन्' धातु लट्लकार प्रथम पुरुष बहुवचन। **निषिताः– नि +** शी + क्त +टाप् प्रत्यय। **प्रविष्य–** प्र + विश् + क्त्वा +ल्यप् प्रत्यय।

टिपपणी– यहाँ पर द्रौपदी के कहने का अभिप्राय यह है कि राजा को दुष्टों के साथ सदा दुष्टता का व्यवहार करना चाहिए। ऐसा न करने पर युद्ध के मैदान में रक्षा कवच से रहित मूर्ख बुद्धि वाला बाणों से मारा जाता है। अतः हे महाराज आप '**षठे षाठ्यं समाचरेत्**' की नीति का पालन कीजिए।

यहाँ पर कवि भारवि ने 'शठे शाठ्यं समाचरेत्' की कहावत को सार्थक किया है।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी क्रोध में आकर महाराज युधिष्ठिर के प्रमाद तथा निष्क्रियता का वर्णन करते हुए कह रहीं हैं कि

गुणानुरक्तामनुरक्तसाधनः
कुलाभिमानी कुलजां नराधिपः।
परैस्त्वदन्यः क इवापहारयेन्
मनोरमामात्मवधूमिव श्रियम्।।31।।

अन्वय– अनुरक्तसाधनः कुलाभिमानी त्वत् अन्यः कः नराधिपः गुणानुरक्ताम् कुलजाम् मनोरमाम् आत्मवधूम् इव श्रियम् परैः अपहारयेत्।

षब्दार्थ– अनुरक्तसाधनः–साधन से अनुरक्त। **कुलाभिमानी–** कुल के अभिमानी। **त्वत्–** तुम से। **अन्यः–** भिन्न या अलग। **कः–** कौन। **नराधिपः–** राजा। **कुलजाम्–** वंश पराम्परा से प्राप्त। **गुणानुरक्ताम्–** गुणों के कारण प्रेम करने वाली। **मनोरमाम्–** सुन्दर। **श्रियम्–** राजलक्ष्मी को। **आत्मवधूम् इव–** अपनी धर्मपत्नी के समान। **परैः–** दूसरों के द्वारा। **अपहारयेत्–**अपहरण करवां सकता है।

अनुवाद– हे महाराज ! आप अस्त्र–शस्त्र और सेवकों से अनुरक्त है। वंश कुल के मर्यादा है, तुम से भिन्न या अलग दूसरा कौन राजा हो सकता है, जो वंश पराम्परा से प्राप्त, गुणों के कारण प्रेम करने वाली सुन्दर राजलक्ष्मी को अपनी भार्या के समान दूसरों के द्वारा कौन अपहरण करवां सकता है। जबकि ऐसा कोई नहीं कर सकता है। अर्थात् हे राजन! आप समस्त साधनों से युक्त है। क्षत्रियकुल के रक्षक है। ये राजलक्ष्मी आपको निःशुल्क वंशपरम्परा से मिली हुई है, केवल आपको इसकी रक्षा करनी है।

परन्तु आपने उस सुखदायिनी राजलक्ष्मी को शत्रुओं के हाथों उसी प्रकार से पराधीन कर दिया है। जिस प्रकार से कोई पुरुष अपनी पत्नी को दूसरे पुरुष के हाथों से अपहृत करवां देता है।

संस्कृत अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् भो राजन् ! अस्मिन् संसारे कदाचित् अपि जनाः न अस्ति यः सुन्दरीं कुलीनाम् च भार्याम् परैः अपहारयेत् तथैव कुलीनोऽनुकूल साधनः कोऽपि राजा न अस्ति यः सन्धि विग्रहादि गुणानुरागिणीं कुलपरम्परागतां मनोरमा राज्यलक्ष्मीं शत्रुभिः स्वयमेवापहरणं कारयेत्।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– उपमा अलङ्कार।

यहाँ पर द्रौपदी ने राजलक्ष्मी की उपमा भार्या से दी है। अतः उपमा अलङ्कार है।

समास– कुलाभिमानी– कुलायाः अभिमानीः, षष्ठी तत्पुरुष समास। **गुणानुरक्ताम्–**गुणैः अनुरक्ता ताम्। तृतीया तत्पुरुष समास। **नराधिपः–** नराणाम् अधिपः, षष्ठी तत्पुरुष समास। **आत्मवधूम्**–आत्मनः वधूः ताम् षष्ठी तत्पुरुष समास।

व्याकरण– अनुरक्तम्– अनु+रञ्ज्+क्त प्रत्यय। **अपहारयेत्–** अप+'हृ' धातु। **श्रियम्–**द्वितीया विभक्ति एकवचन। **अभिमानी–** अभि+मन् धातु घञ्+ङीप् प्रत्यय। **वधूम्–**द्वितीया विभक्ति एकवचन। **मनोरमाम्–** मनस्+रम्+अच्+टाप् प्रत्यय।

टिप्पणी– दुर्योधन के द्वारा जीती गयी पृथिवी को द्रौपदी युधिष्ठिर को पुनः राज्य प्राप्त करने के लिए प्रेरित कर रही है।

प्रकरण– इस श्लोक में द्रौपदी कहती है कि हे राजन् ! आपका राज्य पराधीन हो गया है। फिर भी यह देखकर आपको क्रोध क्यों नहीं आता है। राजधर्म क्षत्रिय के लिए ये शान्तिप्रिय मार्ग अच्छा नहीं होता है। इससे क्या आपकी निन्दा होगी–

भवन्तमेतर्हि मनस्विगर्हिते
विवर्तमानं नरदेव वर्त्मनिः।
कथं न मन्युर्ज्वलयत्युदीरितः
षमीतरुं षुष्कमिवाग्निरुच्छिखः।।32।।

अन्वय– नरदेव एतर्हि मनस्विगर्हिते वर्त्मनि विवर्तमानम् भवन्तम् उदीरितः मन्युः उच्छिखः अग्निः शुष्कं शमीतरुम् इव कथं न ज्वलयति।

शब्दार्थ– नरदेव– हे राजन! **एतर्हि–** संकट के समय में। **मनस्विगर्हिते–** स्वाभिमानी पुरुषों के द्वारा निन्दनीय। **वर्त्मनि–** मार्ग को। **विवर्तमानम्–** अन्तः करण में स्थित। **भवन्तम्–** आपका। **मन्युः–** क्रोध। **(किं न) उदीरितः–** क्यों नहीं उद्दीप्त हो रहा है। **शुष्कं–** सूखे हुए। **शमीतरुम्–** शमी नामक वृक्ष को। **अग्निः–** आग की। **उच्छिखः–** उठी हुई लपटे। **इव–** समान। **कथं**– क्या। **न–** नहीं। **ज्वलयति–** जलाती है।

अनुवाद– द्रौपदी कहती है कि हे राजन् ! संकट के समय में स्वाभिमानी पुरुषों के द्वारा निन्दनीय मार्ग को त्याग देना चाहिए। आप अपने अन्दर स्थिर रहने वाले क्रोध को उसी प्रकार उद्दीप्त कीजिए, जिस

प्रकार शमी नामक वृक्ष के गर्भ में अग्नि स्थित रहकर सूखे तिनके को जला देती है। इसी प्रकार से आप भी अपने अन्दर के क्रोध को प्रकट करके शत्रुओं का विनाश क्यों नहीं कर देते हैं।

संस्कृत अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् भो राजन् ! अस्मिन् काले भवान् शूरपुरुषैः निन्दनीय मार्गे स्थितं अस्ति। भवन्तम् युधिष्ठिरं प्रदीप्तःक्रोधः कथं न ज्वलयति यथा शमीवृक्षगर्भः अग्निः उद्दीप्त भूत्वा तृणे ज्वलयति।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– उपमा अलङ्कार।

यहाँ पर युधिष्ठिर के अन्दर रहने वाले तेजस्वी क्रोध की उपमा शमी नामक वृक्ष के भीतर रहने वाली अग्नि से की गयी है। अतः उपमा अलङ्कार है।

समास– नरदेवः– नराणां देवः, नरेषु देवः, षष्ठी तत्पुरुष समास और सप्तमी तत्पुरुष समास है। **शमीतरुम्–** शमी चासौ तरुश्च, कर्मधारय समास। **उच्छिकः**– उद्गतः शिखा यस्य सः, बहुब्रीहि समास।

व्याकरण– विवर्तमानम्– वि+ वृत्+शानच् प्रत्यय। **भवन्तम्–** द्वितीया विभक्ति एकवचन। **शुष्कं–** शुष् धातु+क्त प्रत्यय। **ज्वलयति–** लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन। **अग्निः–** पञ्चमी और षष्ठी विभक्ति एकवचन।

टिप्पणी–उपर्युक्त पद्य में शमीवृक्ष का वर्णन किया गया है। इस वृक्ष की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके अन्दर सदा अग्नि विद्यमान रहती है। सूखे तिनको को जलाने के लिए इसे अतिरिक्त अग्नि की आवश्यकता नहीं होती है।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी वर्णन करते हुए कहती है कि हे महाराज! आप शान्तस्वभाव को त्याग दीजिए और क्रोध को धारण कीजिए–

अवन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापदाम्
भवन्तिवष्याः स्वयमेव देहिनः
अमर्षषून्येन जनस्य जन्तुना
न जातहार्देन न विद्विषादरः।।33।।

अन्वय– अवन्ध्यकोपस्य आपदाम् विहन्तुः देहिनः स्वयम् एव वश्याः भवन्ति अमर्षशून्येन जन्तुना जातहार्देन जनस्य आदरः न विद्विषादरः न।

शब्दार्थ– अवन्ध्यकोपस्य– सफल क्रोध करने वाले। **आपदाम्–** विपत्तियों को या दुःखों को। **विहन्तुः**– निवारण या दूर करने वाले। **देहिनः–** शरीधारी पुरुष। **स्वयम् एव–** स्वयं ही। **वश्याः–** वश में। **भवन्ति–** हो जाते है। **अमर्षशून्येन–** क्रोध न करने वाले। **जन्तुना–** प्राणियों में। **जातहार्देन–** प्रेम या अनुराग पैदा करने वाले। **जनस्य–** मनुष्य का (राजा का)। **आदरः न–** आदर या सम्मान नहीं करते। **विद्विषा–** अरि या शत्रु बने रहने पर। **दरः न–** भय या डर नही लगता।

अनुवाद– हे राजन! राजाओं के द्वारा सफल क्रोध करने पर और प्रजा के दुःखों को दूर करने पर शरीर धारी पुरुष भी अपने (राजा के) अधीन हो जाते हैं। जो राजा क्रोध से रहित होकर मनुष्यों में प्रेम उत्पन्न

करते हैं। उस मनुष्य का (राजा का) संसार में लोग आदर नहीं करते हैं। परन्तु शत्रु बने रहने पर उन प्रजाओं से डर नहीं लगता है।

संस्कृत अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिरात् कथयति यत् हे राजन् ! अस्मिन् संसारे सर्वेजनाः शत्रुनिग्रह समर्थस्य राज्ञः आत्मना एवं अधीनाः भवन्ति। ये जनाः निष्पक्षक्रोधः भवन्ति तान् जनान् मित्राणि न सम्मानं कुर्वन्ति अपितु अप्रसन्नेन शत्रुः भयं न भवति।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–काव्यलिङ्ग अलङ्कार।

काव्यलिङ्ग का लक्षण– **काव्यलिङ्ग हेतोर्वाक्यपदार्थता।** (काव्यप्रकाश)

समास– अवन्ध्यकोपस्य– अवन्धः कोपः यस्य सः। **अमर्षशून्येन–** अमर्षात् शून्येन, पञ्चमी तत्पुरुष समास।

व्याकरण– विहन्तुः– वि+हन्+तृच् प्रत्यय। षष्ठी विभक्ति एकवचन। **जनस्य–** षष्ठी विभक्ति एकवचन। **आपदाम्–** आ+पद्+ क्विप् प्रत्यय, षष्ठी विभक्ति बहुवचन। **आदरः–** आ+दृ+ अप् प्रत्यय। **वश्याः–** वश् धातु + यत् प्रत्यय। **भवन्ति–** भू धातु, झि प्रत्यय, लट्लकार प्रथम पुरुष बहुवचन।

टिप्पणी– द्रौपदी के कहने का अभिप्राय यह है कि राजा के क्रोधी होने पर शत्रु उनसे डरते हैं। राजनीति में राजा के लिए क्रोध करना आवश्यक होता है। शान्त स्वभाव को धारण करना मुनियों का धर्म है, राजाओं का नहीं।

प्रकरण–इस श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठर पर क्रोध करती हुई भीम की स्थिति को देखकर, उसकी दुर्दशा का वर्णन करते हुए कहती है कि–

परिभ्रमन् लोहितचन्दनोचितः
पदातिरन्तर्गिरि रेणुरूषितः।
महारथः सत्यधनस्य मानसं
दुनोति नो कच्चिदयं वृकोदरः।।34।।

अन्वय–लोहितचन्दनोचितः महारथः अयम् वृकोदरः रेणुरूषितः पदातिः अन्तर्गिरि परिभ्रमन् सत्यधनस्य मानसं कच्चित् नो दुनोति।

षब्दार्थ– लोहितचन्दनोचितः– लाल चन्दन लगाने के आदी। **महारथः–** महान रथ पर बैठकर चलने वाले। **अयम्–** यह। **वृकोदरः–**भीम। **रेणुरूषितः–** धूल रञ्जित। **पदातिः–**पैदल। **अन्तर्गिरि–**पर्वत की गुफाओं में। **परिभ्रमन्–**विचरण करता हुआ। **सत्यधनस्य–** सत्य बोलने वाले आपके। **मानसं–**मन को। **कच्चित्–**थोड़ा। **नो दुनोति–**दुःख होता है।

अनुवाद– हे महाराज ! आपके छोटे भाई भीम पहले मस्तक पर लाल चन्दन लगाकर, महान रथ पर बैठकर चलता था। किन्तु आज वहीं भीम पैदल धूल धूसरित पर्वत की गुफाओं में विचरण कर रहा है। क्या भीम की इस दुर्दशा को देखकर, सत्य के धनी युधिष्ठिर आपका का मन थोड़ा भी दुःखी नहीं हो रहा है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके द्रौपदी भीमस्य दुर्दशायाः वर्णयति युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् यस्य भीमः पूर्वं रक्तचन्दनलेपनेन सुशोभितः अभवत् रथेन भ्रमणं च करोति स्म्। अस्मिन् काले सः भीमः धूलरूषितः पदाभ्याम् पर्वतेषु परिभ्रमन्। एषः भीमस्य स्थितिः द्रष्टव्यं सत्यधनस्य तव मानसं किम् न पीडयति।

लोहितचन्दन और वृकोदरः भीम का विशेषण है।

सत्यधनस्य युधिष्ठिर का विशेषण है।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–विषम अलङ्कार है।

लक्षण– क्वचिद्यदतिवैधर्म्यान्न श्लेषो घटनामियात्।
कर्तुः क्रियाफलावाप्तिर्नैवानर्थश्च यद् भवेत्।। (काव्यप्रकाश)

समास– लोहितचन्दन– लोहित चन्दन यस्य सः, बहुब्रीहि समास, लोहितं चन्दनं चासौ कर्मधारय समास। **वृकोदरः–** वृकः उदरं यस्य सः, बहुब्रीहि समास। **सत्यधनस्य–** सत्यं धनं यस्य सः, बहुब्रीहि समास। **महारथ–** महान चासौ रथः, कर्मधारय समास। **रेणुरूषितः–** रेणभिः रूषितः, तृतीया तत्पुरुष समास।

व्याकरण– परिभ्रमन्– परि+भ्रम्+शतृ प्रत्यय। **सत्यधनस्य–** षष्ठी विभक्ति एकवचन। **मानसं**–द्वितीया विभक्ति एकवचन। **दुनोति–** 'दु' धातु+तिप् प्रत्यय, लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन।

टिप्पणी– यहाँ पर द्रौपदी भीम की दुर्दशा का वर्णन इस लिए कर रही है कि इससे भी युधिष्ठिर के मन में क्रोध उत्पन्न हो। किन्तु युधिष्ठिर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

प्रकरण– द्रौपदी भीम की दुर्दशा का वर्णन करने पश्चात् अर्जुन की दयनीय स्थिति का वर्णन करते हुए युधिष्ठिर से कहती है कि–

विजित्य यः प्राज्यमयच्छदुत्तरान्
कुरूनकुप्यं वसु वासवोपमः।
स वल्कवासांसि तवाधुनाहरन्
करोति मन्युं न कथं धनन्जयः।।35।।

अन्वय– वासवोपमः यः उत्तरान् कुरून् विजित्य प्राज्यम् अकुप्यम् वसु अयच्छत्। सः धनञ्जयः अधुना वल्कवासांसि आहरन् तव मन्युं कथं न करोति।

शब्दार्थ– वासवोपमः– इन्द्र के समान पराक्रमी। **यः–** जो। **उत्तरान्–** उत्तर दिशा में स्थित। **कुरून्–** कुरुदेश को। **विजित्य–** जीतकर। **प्राज्यम्–** अत्यधिक। **अकुप्यम्–** सोना–चाँदी। **वसु–** धन। **अयच्छत्–** देता था। **सः–** वह। **धनञ्जयः–** धन को जीतने वाला अर्जुन। **अधुना–** इस समय। **वल्कवासांसि–** वल्कल वस्त्रों में। **आहरन्–** आते हुए देखकर। **तव–** तुम **मन्युं–** क्रोध। **कथं न करोति–** क्यों नहीं करते हो।

अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि– इन्द्र के समान पराक्रम वाले अर्जुन, उत्तर दिशा में स्थित कुरुदेश को जीत करके, आपको अत्यधिक सोना–चाँदी और धन देता था। आज उसी धनञ्जय (अर्जुन) को इस समय वल्कल वस्त्रों में आते हुए देखकर, क्यों तुम्हें क्रोध नहीं उत्पन्न हो रहा है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके द्रौपदी भीमस्य वर्णनं कृत्वा तत्पश्चात् अर्जुनस्य दुर्दशायाः वर्णयति युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् इन्द्रतुल्य पराक्रमः अर्जुनः उत्तरदिशायां स्थित कुरुदेशान् जित्वा प्रभूतं

सुवर्णरजतं धनं दत्त्वान् सः अर्जुनः इदानीं भवते वल्कलवस्त्राणि आगच्छति दृष्ट्वा युधिष्ठिरस्य क्रोधं कस्मात् कारणात् नहि प्रादुर्भूतः।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– उपमा अलङ्कार।

समास– वासवोपमः– वासवः उपमा यस्य सः, बहुब्रीहि समास। **धनञ्जयः–**धनं जनं यस्य सः, बहुब्रीहि समास। **अकुप्यम्–** न कुप्यम्, नञ् तत्पुरुष समास।

व्याकरण– विजित्य– वि+जि धातु+ क्त्वा/ ल्यप् प्रत्यय। **आहरन्–** आ+हृ धातु+शतृ प्रत्यय। **कुरून्–**द्वितीया विभक्ति बहुवचन। **धनञ्जयः–** धन्+ जि+ खच् प्रत्यय। **करोति–** कृ धातु+ तिप् प्रत्यय, लट्लकार प्रथम पुरुष बहुवचन।

टिप्पणी– यहाँ पर द्रौपदी अर्जुन की दीन–हीन स्थिति का वर्णन करके धर्मात्मा युधिष्ठिर के क्रोध को बढ़ाना चाहती है। छोटे भाई का पालन–पोषण करना बड़े भाई का कर्त्तव्य है। किन्तु वल्कल वस्त्र पहने हुए अर्जुन अत्यन्त दीन अवस्था में दिखाई दे रहे हैं। फिर भी उनको उस पर दया नहीं आ रही हैं।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी भीम और अर्जुन की दुर्दशा का वर्णन के उपरान्त नकुल और सहदेव के विषय में वर्णन करते हुए युधिष्ठिर से कहती है कि–

वनान्तषय्याकठिनीकृताकृती
कचाचितौ विष्वगिवागजौ गजौ।
कथं त्वमेतौ धृतिसंयमौ यमौ
विलोकयन्नुत्सहसे न बाधितुम्।।36।।

अन्वय– वनान्तशय्याकठिनीकृताकृती विष्वक् कचाचितौ अगजौ गजौ इव एतौ यमौ विलोकयन् त्वम् कथम् धृतिसंयमौ बाधितुम् न उत्सहसे।

शब्दार्थ– वनान्तशय्या– वनरूपी शय्या पर शयन करने से। **आकृती–** शरीर। **कठिनीकृत–** कठोर हो गया है। **विष्वक्–** सब ओर से। **कचाचितौ–** शरीर पर बाल उग गये है। **अगजौ–** पर्वत पर उत्पन्न। **गजौ इव–** दो हाथी के समान। **एतौ–** इन दोनों। **यमौ–** नकुल और सहदेव। **विलोकयन्–** देख करके। **त्वम्–** तुम। **धृतिसंयमौ–** धैर्य और संयम को। **बाधितुम्–** त्यागने के लिए। **कथम्–** क्यों। **न–** नहीं **उत्सहसे–** उत्साहित हो रहे हो।

अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि– वनरूपी शय्या पर शयन करने से, आपके छोटे भाईयों का शरीर कठोर हो गया है। सब ओर से शरीर पर बाल उग गये है। पर्वत पर उत्पन्न दो हाथी के समान, इन दोनों नकुल और सहदेव को देख करके, तुम धैर्य और संयम को त्यागने के लिए क्यों नहीं उत्साहित हो रहे हो।

संस्कृत अनुवाद– द्रौपदी नकुलसहदेव विषयक वर्णनं क्रियते युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् भो राजन् ! वनभूमिशयनेन कठोरीकृत सर्वतः तनुः विशीर्णकेशव्याप्तौ एतौ नकुलसहदेवौ पश्यति कृत्वा भवान् युद्धाय कथं न करोति।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– उपमा अलङ्कार।

समास– वनान्तशय्या– वनान्त एव शय्या, कर्मधारय समास। **धृतिसंयमौ**– धृतश्च संयमश्च, द्वन्द्व समास।
व्याकरण– त्वम्– प्रथमा विभक्ति एकवचन। यह युष्मद् का सर्वनाम रूप है। **बाधितुम्**– बाध्+तुमुन प्रत्यय है। **विलोकयन्**– वि+लोक+यत्+शत् प्रत्यय। **कृत**– कृ धातु+क्त प्रत्यय। **आकृतिः**– आ+कृ+क्तिन प्रत्यय। **धृतिः**– धृ धातु+क्तिन प्रत्यय।

टिप्पणी– इस पद्य में द्रौपदी ने नकुल तथा सहदेव की अवस्था का वर्णन किया है। दो हाथी के समान विशाल शरीर वाले दोनों भाई पृथिवी पर सोते थे। इसलिए दोनों के शरीर की बनावट अधिक कठोर हो गयी थी।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी द्वारा भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव की दुर्दशा का वर्णन करने के बावजूद युधिष्ठिर पर कोई असर नहीं पड़ा। तब अपने मानसिक पीड़ा का वर्णन करते हुए कहती है कि–

इमामहं वेद न तावकीं धियं
विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्त
विचिन्तयन्त्या भवदापदं परां
रुजन्ति चेतः प्रसभं ममाधयः।।37।।

अन्वय– अहम् इमाम् तावकीम् धियम् न वेद। चित्तवृत्तयः विचित्ररूपाः खलु पराम् भवदापदम् विचिन्तयन्त्याः मम आधयः प्रसभम् चेतः रुजन्ति।

शब्दार्थ– अहम्– मैं (द्रौपदी) **इमाम्**–इस प्रकार। **तावकीम्**–तुम्हारी। **धियम्**– बुद्धि को। **न वेद**– नहीं जान पा रहीं हूँ। **खलु**– निश्चय ही। **चित्तवृत्तयः**– मन की वृत्तियाँ। **चित्तवृत्तयः**– अनेक रूपों वाली। **भवदापदम् पराम्**– आपके उत्कृष्ट पर। **विचिन्तयन्त्याः**– विचार करके। **मम्**– मेरी **आधयः**– मनोव्यथाएं या मानसिक पीड़ा। **प्रसभम्**– बलपूर्वक। **चेतः**– मन को। **रुजन्ति**– दुःखी कर रही हैं।

अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि हे राजन् ! मैं इस समय तुम्हारी बुद्धि को नहीं समझ पा रही हूँ। क्योंकि मन की वृत्तियाँ अनेक रूपों वाली होती हैं। आपके उत्कृष्ट आपत्ति के विषय में विचार करती हुई मेरी मानसिक मनोव्यथाएं मन को बलपूर्वक दुःखी कर रही हैं।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् पद्ये द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् हे राजन् ! अहं द्रौपदी त्वदीयम् अयं मतिं न जनामि। अस्य संसारे मनुष्याणाम् विविधः चित्तवृत्तयः भवन्ति ताः बुद्धि दुष्करः भवन्ति। भवतः परमविपत्तिं विचारयन्त्याः। मम द्रौपद्याः मानसिकव्यथाः बलपूर्वकं निरन्तरं पीडयति।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– काव्यलिङ्ग और अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

काव्यलिङ्ग का लक्षण– काव्यलिङ्ग हेतोर्वाक्यपदार्थता। (काव्यप्रकाश)

अर्थान्तरन्यास का लक्षण– सामान्यं वा विशेषो वा तदन्येन समर्थ्यते।

यत्तु सोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येणतरेण वा।। (काव्यप्रकाश)

समास– चित्तवृत्तयः– चित्तानां वृत्तयः, षष्ठी तत्पुरुष समास।

व्याकरण– विचिन्तय– वि+चिन्त्+ल्यप् प्रत्यय। **रुजन्ति**–रुज् धातु, झि प्रत्यय, लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन। **चेतः–** ची धातु+क्त प्रत्यय। **वेद–** विद् धातु, घञ् प्रत्यय। **अहम्–** प्रथम पुरुष एकवचन, यह अस्मद् का सर्वनाम रूप है।

टिप्पणी– युधिष्ठिर के शान्त स्वभाव को त्याग न करा पाने के कारण द्रौपदी सभी को विदित कराना चाहती है कि मनुष्य का मन अधिक गतिशील है।

प्रकरण– इस श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठिर के क्रोध को बढ़ाने का प्रयास कर रही है–

पुराधिरूढः षयनं महाधनं
विबोध्यसे यः स्तुतिगीतिमंगलैः।
अदभ्रदर्भामधिषय्या स स्थलीं
जहासि निद्रामषिवैः षिवारुतैः।।38।।

अन्वय– यः महाधनम् शयनम् अधिरूढः स्तुतिगीतिमंगलैः पुरा विबोध्यसे सः अदभ्रदर्भाम् स्थलीम् अधिशय्या अशिवैः शिवारुतैः निद्राम् जहासि।

शब्दार्थ– पुरा– पहले। **यः**–जो। **महाधनम्**–अधिक मूल्यवान्। **शयनम्**–शय्या पर। **अधिरूढः**–आरुढ़ होकर। **स्तुतिगीतिमंगलैः**–स्तुति और मांगलिक गीतों से। **विबोध्यसे**–जगाये जाते थे। **सः**–वह (युधिष्ठिर) **अदभ्रदर्भाम्–** अत्यधिक कुशों से युक्त। **स्थलीम्–** वन की भूमि पर। **अधिशय्या**–शयन करते हैं। **अशिवैः**– अमाङ्गलिक। **शिवारुतैः**–सियारिनियों के आवाज से। **निद्राम्**–नींद को। **जहासि–** त्यागते हैं।

अनुवाद– प्रस्तुत श्लोक में रानी द्रौपदी ने महाराज युधिष्ठिर से कहा कि हे राजन् ! पहले तो आप मूल्यवान शय्या पर आरूढ़ होकर सोते थे। स्तुति और मङ्गल परक गीतों के द्वारा जगाये जाते थे। आज वही राजन् अत्यधिक कुशों से युक्त वन की भूमि पर सो रहे हैं तथा अमाङ्गलिक श्रृङ्गालों की आवाजों को सुनकर नींद को त्याग रहे है। अर्थात् प्रातः काल अमंगल सूचक सियारिनियों के कर्ण अप्रिय ध्वनियों से जगाये जा रहे है।।

संस्कृत अनुवाद– – अस्मिन् श्लोके द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् हे राजन् ! भवतः जीवने सम्प्रतिकाले विशदपरिवर्तनम् दृश्यसे। पुराकाले त्वं बहुमूल्यं शय्यायाम् अधिशयनम् अकुरुः। भवान् स्तुतिगीतमङ्गलैः ध्वनिभिः विबोध्यसे। सः त्वम् अद्यतनसमयेबहुकुशां वनभूमि सुप्त्वा सः शृगालध्वनिभिः निद्रां परित्यजति।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– विषम अलङ्कार है।

लक्षण– क्वचिद्यदतिवैधर्म्यान्न श्लेषो घटनामियात्।
कर्तुः क्रियाफलावाप्तिर्नैवानर्थश्च यद् भवेत्।। (काव्यप्रकाश)

समास– अशिवैः– न शिवैः, नञ् तत्पुरुष समास। **महाधनम्–** महान् चासौ धनं, कर्मधारय समास, महत् धनं यस्य सः, बहुब्रीहि समास।

व्याकरण– शयनम्– शी धातु ल्युट् प्रत्यय। **अधिशय्या–** अधिः+शी धातु+यत्+टाप् प्रत्यय। **अधिरूढः–** अधि+रुह् धातु+ क्त प्रत्यय। **स्थलीम्–** स्थल+अच्+ङीष् प्रत्यय। **मङ्गलैः, अशिवैः, शिवारुतैः–** तीनों तृतीया विभक्ति बहुवचन का रूप है। **जहासि–** जह् धातु+लट्लकार मध्यम पुरुष एकवचन।

टिप्पणी– इस पद्य में द्रौपदी ने युधिष्ठिर के जीवन का वास्तविक वर्णन किया है। जब वे राजमहल में निवास करते थे तब उन्हें मङ्गलगीत गाकर जगाया जाता था और जब वे वन में जाकर रहने लगे तो उन्हें जङ्गली जीवों के द्वारा जगाया जाता था।

प्रकरण– युधिष्ठिर का वनवास के समय जब शारीरिक बल अधिक क्षीण होता है तब द्रौपदी वर्णन करते हुए कहती है कि–

पुरोपनीतं नृप रामणीयकं
द्विजातिशेषेण यदेतदन्धसा।
तदद्य ते वन्यफलाशिनः परं
परैति कार्श्यं यशसा समं वपुः।।39।।

अन्वय– हे नृप ! यत् एतत् वपुः पुरा द्विजातिशेषेण अन्धसा रामणीयकम् उपनीतम् वन्यफलाशिनः ते तद् वपुः यशसा समं परम् कार्श्यम् परैति।

शब्दार्थ– हे नृप !– हे राजन्। **यत्–** जो। **एतत्–** यह। **वपुः–** शरीर। **पुरा–** पहले। **द्विजातिशेषेण–** ब्राह्मणों को भोजन कराने के बाद बचे हुए। **अन्धसा–** अन्न से। **रामणीयकम्–** सुन्दरता को। **उपनीतम्–** प्राप्त हो रहा था। **वन्यफलाशिनः–** वन के फलों से। **ते–** तुम्हारा। **तद्–** वही। **वपुः–** शरीर। **यशसा समं–** यश के समान। **परम्–** अत्यधिक। **कार्श्यम्–** दुर्बलता को। **परैति–** प्राप्त हो रहा है।

अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि हे राजन् ! ब्राह्मणों को भोजन कराने के पश्चात् बचे हुए अन्न का सेवन करने से आपका शरीर सुन्दरता को प्राप्त था, अर्थात् ब्राह्मणों को भोजन कराने के बाद जो भोजन बचता था उसको आप खाते थे तो भी आपका शरीर बहुत हृष्ट–पुष्ट और स्वस्थ्य था। परन्तु आज वहीं शरीर जङ्गली फलों और कन्दमूलों को खाने से तुम अधिक दुर्बलता को प्राप्त हो गये हो तथा तुम्हारा यश भी क्षीण हो रहा है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके द्रौपदी युधिष्ठिरात् कथयति हे महाराज ! तव शरीरस्य दुर्बलतां दृष्ट्वा अहं चिन्तयामि यत् पुरा राजप्रसादेषु निवसतः तव शरीरं द्विजमुक्त अवशिष्टेन अन्नं भुक्तः भवान् बलिष्ठ दृश्यते। अपितु इदानीं वनवास अवसरे एतत् शरीरं अद्य वने उत्पन्नः फलानाम् उपभोगेन यशसा तुल्य अतिमात्रं कृशताम् प्राप्नोति।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– सहोक्ति अलङ्कार।

यहाँ पर सम् शब्द से यश तथा शरीर की दुर्बलता का वर्णन किया गया है। इसलिए सहोक्ति नामक अलङ्कार है।

समास– **द्विजातिशेषेण**– द्विजातिभ्यः शेष तेन, पञ्चमी तत्पुरुष समास।

व्याकरण– अन्धसा– तृतीया विभक्ति एकवचन। **उपनीतम्–** उप+नी धातु+क्त प्रत्यय। **कार्श्यम्–** कृश+ण्यञ् प्रत्यय। **परैति–** परा+इण+तिप् प्रत्यय, लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन।

टिप्पणी– उस समय समाज में ब्राह्मणों का स्थान सबसे उच्च था। राजा महाराजा लोग सर्वप्रथम द्विजों को भोजन कराने के बाद स्वयं भोजन करते थे।

प्रकरण– इस श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठर की दुःख भरी स्थिति को देखकर कहती है कि आपके समस्त दुःखों का कारण केवल दुर्योधन है, जिसके कारण आपकी और आपके भाईयों की ऐसी दशा हो गयी है–

अनारतं यौ मणिपीठषायिनौ
वरंजयद्राजषिरः स्रजां रजः।
निषीदतस्तौ चरणौ वनेषु ते
मृगद्विजालूनषिखेषु बर्हिषाम्।।40।।

अन्वय– अनारतम् मणिपीठशायिनौ यौ राजशिरः स्रजाम् रजः अरञ्जयत् तौ ते चरणौ मृगद्विजालूनशिखेषु बर्हिषाम् वनेषु निषीदतः।

शब्दार्थ– अनारतम्–निरन्तर या हमेशा। **मणिपीठषायिनौ**–मणि जणित आसन। **यौ–** जो। **राजषिरः**– राजाओं के सिर पर स्थित । **स्रजाम्**–मालाओं के। **रजः**–पराग से। **अरञ्जयत्**–सुशोभित होते थे। **तौ**–वे। **ते**–तुम्हारे। **चरणौ**–दोनों पैर। **मृगद्विजालून–** ब्राह्मण और द्विजों द्वारा काटे गये। **बर्हिषाम्–** कुशों के। **षिखेषु–** अग्रभाग पर। **वनेषु–** वनों में। **निषीदतः–** पड़ रहे हैं।

अनुवाद– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि– हे महाराज ! पहले आपके दोनों चरण मणियों से युक्त आसन पर, राजाओं के सिर पर स्थिति मालाओं के पराग से सुशोभित होते थे। किन्तु आज वही दोनों पैर मृग और ब्राह्मणों के द्वारा खाये गये घास के नुकीले शिखरों पर, कुशाओं के वनों में स्थिति है। अर्थात् वनवास काल में युधिष्ठिर को उन कुशाओं पर चलना पड़ता था, जिसके आगे के भाग को मृगों तथा ब्राह्मणों द्वारा कुतर दिया गया था।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् पद्ये द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् पुरा हस्तिनापुरनगरे स्वअनुशासनम् कृत्वा सुखम् अनुभवतः भवतः यौ तव चरणौ मणिपादपीठस्थायिनौ प्रणयति राजानः आगत्य शिरोनिहितप्रसूनमालानां परागे तव चरणौ अधुना वनवाससमये हरिणैः ब्राह्मणैः च कुशानां अग्रभागेषु वनेषु तिष्ठतः।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–विषम अलङ्कार।

लक्षण– क्वचिद्यदतिवैधर्म्यान्न श्लेषो घटनामियात्।
कर्तुः क्रियाफलावाप्तिर्नैवानर्थश्च यद् भवेत्।। (काव्यप्रकाश)

समास– मृगद्विजाः– मृगाश्च द्विजाश्च, द्वन्द्व समास।

व्याकरण– अरञ्जयत्– रञ्ज् धातु= भूतकाल प्रथम पुरुष एकवचन। **षिखेषु–** सप्तमी विभक्ति बहुवचन। **बर्हिषाम्–** षष्ठी विभक्ति बहुचवन। **वनेषु–** सप्तमी विभक्ति बहुवचन। **निषीदतः–** नि+शी+इण+क्त प्रत्यय। **चरणौ–** प्रथमा–द्वितीया विभक्ति द्विवचन का रूप है।

टिप्पणी– यहाँ पर द्रौपदी ने युधिष्ठिर के राज समृद्वि का वर्णन किया है। कुश का अग्र भाग अधिक नुकीला होता है, जिस पर युधिष्ठर को वनवास काल में चलना पड़ता था।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठिर की दुःख भरी स्थिति को देखकर कहती है कि आपकी यह दुर्गति शत्रुओं के द्वारा की गयी है। इस प्रकार वर्णन करते हुए कहती है कि–

द्विषन्निमित्ता यदियं दषा ततः

समूलमुन्मूलयतीव मे मनः।

परैरपर्यासितवीर्यसम्पदां

पराभवोऽप्युत्सव एव मानिनाम्।।41।।

अन्वय– यत् इयम् दशा द्विषन्निमित्ता ततः मे मनः समूलम् उन्मूलयति इव परैः अपर्यासितवीर्यसम्पदां मानिनाम् पराभवो अपि उत्सवः एव।

शब्दार्थ– यत्–जो। **इयम्**–यह। **दशा–दु**र्दशा। **द्विषन्निमित्ता**–शत्रुओं के का रण हुई है। **ततः–** इसके पश्चात् । **मे मनः–** मेरा मन। **समूलम्–** जड़ सहित। **उन्मूलयति–** अधिक क्रोधित हो रहा है। **परैः–** शत्रूओं के द्वारा। **अपर्यासितवीर्यसम्पदां–** जिसके वीर सम्पदा को नष्ट नहीं किया गया। **मानिनाम्**–स्वाभिमानी लोगों के लिए। **पराभवो–** पराजय। **अपि**–भी। **उत्सवः एव इव–** उत्सव ही के समान है।

अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठर से कहती है कि– हे राजन् ! यह तुम्हारी दुर्दशा केवल शत्रुओं के कारण हुई है। आपकी ये दशा देखने के पश्चात् मेरा मन जड़ सहित अत्यधिक क्रोधित हो रहा है। क्योंकि शत्रुओं के द्वारा जिसके धन सम्पदा को नष्ट नहीं किया गया, उन स्वाभिमानी लोगों के लिए, पराजय भी उत्सव के समान है। अर्थात् स्वाभिमानी लोग हार जाने पर उत्सव ही मनाते हैं।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् हे राजन् ! एषः ते दुर्दशाः शत्रुर्निमित्ता अस्ति। अतएव मे मनः अत्यधिकम् व्याकुलयति। यथा शत्रुभिः अखण्डितबलपराक्रम् सम्पदां मनस्विनाम् विपत्तिः अपि हर्षस्य कारणं अस्ति।

पराभवोऽप्युत्सव एव मानिनाम्। सूक्तिपरक वाक्य है।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

समास– द्विषन्निमित्ता– षष्ठी तत्पुरुष समास।

व्याकरण– मानिनाम्– षष्ठी विभक्ति बहुवचन। **उत्सवः–** उत्+सू+अप् प्रत्यय। **पराभवः–** परा+भू+ अप् प्रत्यय।

टिप्पणी– यहाँ द्रौपदी युधिष्ठिर को कायरता त्यागने और साहस को धारण करने के लिए प्रेरित करती है।

प्रकरण–द्रौपदी शत्रुओं द्वारा की दुर्दशा का वर्णन करने के उपरान्त युधिष्ठिर को शान्त स्वभाव त्यागने के लिए कहती है। जिसका वर्णन इस पद्य में किया गया है–

विहाय षान्तिं नृप ! धाम तत्पुनः
प्रसीद सन्धेहि वधाय विद्विषाम्।
व्रजन्ति षत्रूनवधूय निःस्पृहाः
षमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः।।42।।

अन्वय– हे नृप ! शान्तिं विहाय विद्विषाम् वधाय तत् धाम पुनः सन्धेहि। निःस्पृहाः मुनयः शत्रून् अवधूय शमेन सिद्धिम् व्रजन्ति भूभृतः न।

शब्दार्थ– हे नृप– हे राजन। **शान्तिं**– शान्त को। **विहाय**– त्यागकर। **विद्विषाम्**– शत्रुओं का। **वधाय**– वध करने के लिए। **पुनः** – फिर से। **तत्**– उस (क्षत्रिय के) **धाम**–तेज को। **सन्धेहि**–धारण करो। **निःस्पृहाः**– कामनाओं से रहित। **मुनयः**– मुनिजन। **शत्रून्**– शत्रुओं को। **अवधूय**– जीतकर। **शमेन**– शान्ति द्वारा। **सिद्धिम्**– सिद्धि को। **व्रजन्ति**– प्राप्त करते है। **भूभृतः**– राजा लोग। **न**–नहीं।

अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि– हे राजन् ! शान्त को त्यागकर शत्रुओं का वध करने के लिए आप फिर से क्षत्रिय के तेज को धारण करो। क्योंकि मुनिजन कामनाओं से रहित, शत्रुओं को जीतकर शान्ति द्वारा सिद्धि को प्राप्त करते हैं, किन्तु राजा लोग शान्ति द्वारा शत्रुओं को नहीं जीत सकते हैं।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् भो राजन् ! शान्तिं विहाय क्षत्रियधर्मं धारयति कुरु। शमं त्यक्त्वा शत्रुणाम् विनाशाय स्वजनेषु कृपां कुरु स्वतः सम्यक् रूपेणतेजः स्वीकुरु निःअभिलाषिणः मनुयः कामादि रिपून् शान्त्या विजित्य मात्रेण सिद्धिं प्राप्तवान् नहि राजनः।

शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः। यह सूक्तिपरक वाक्य है।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

समास– षत्रूनवधूय– द्वितीया तत्पुरुष समास।

व्याकरण– विहाय– वि+हा+क्त्वा+ल्यप् प्रत्यय। **व्रजन्ति**– लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन। **भूभृतः**– भू+भृ+क्त प्रत्यय। **शत्रून्**– द्वितीया विभक्ति बहुवचन। **विद्विषाम्**– षष्ठी विभक्ति बहुवचन।

टिप्पणी– यहाँ पर द्रौपदी के ओजस्विता का वर्णन किया गया है।

प्रकरण– द्रौपदी युधिष्ठिर पर व्यङ्ग्य करते हुए कहती है कि यदि तुम इस तरह शान्त होकर बैठ जाओंगे तो लोगों का स्वाभिमान स्वयं मिट जाएगा। इसलिए दुर्योधन से तुम्हें बदला शीघ्र लेना चाहिए। इस प्रकार वर्णन करते हुए कहती है कि–

पुरः सरा धामवतां यशोधनाः
सुदुःसहं प्राप्य निकारमीदृशम्।
भवादृशाश्चेदधिकुर्वते रतिं,
निराश्रिता हन्त हता मनस्विता।।43।।

अन्वय– धामवताम् पुरः सराः यशोधनाः भवादृशाः सुदुःसहम् ईदृशम् निकारम् प्राप्य रतिम् अधिकुर्वते चेत् हन्त मनस्विता निराश्रया हता।

शब्दार्थ– धामवताम्– तपस्वियों में। **पुरः सराः–** अग्रणी। **यशोधनाः–** यश को धन मानने वाले। **भवादृशाः–** आप जैसे लोग। **सुदुःसहम्–** अत्यन्त असहनीय। **ईदृशम्–** इस प्रकार के। **निकारम** अपमान को**। प्राप्य–** प्राप्त करके। **चेत्–** यदि। **रतिम्–** शान्त को। **अधिकुर्वंते–** स्वीकार करते हैं। **हन्त–** दुःख का विषय है। **मनस्विता–** स्वाभिमानिता। **निराश्रया–**आश्रयहीन होकर। **हता–**नष्ट हो गई है।

अनुवाद– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी कहती है कि– हे महाराज ! आप तपस्वियों में अग्रणी है। यश को धन मानने वाले आप जैसे लोग, इस प्रकार के अत्यन्त असहनीय अपमान को प्राप्त करके, यदि शान्त को सब कुछ स्वीकार करते हैं, तो मेरे लिए ये बड़े दुःख का विषय है। क्योंकि आपकी स्वाभिमानिता आश्रयहीन होकर नष्ट हो गई है।

संस्कृत अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिरात् कथयति यत् तेजस्विनां अग्रेसराः कीर्तिधनाः भवत्सदृशो महान्तोजनाः एनं विधम् अत्यन्तं असह्यं पराभवं प्राप्य। यदि सन्तोषं स्वीकुर्वन्ति तर्हि मवस्विता आश्रयरहिता सती विनष्टा एव भविष्यति।

निराश्रिता हन्त हता मनस्विता। यह सूक्तिपरक कथन है।

छन्द–वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार– परिकर अलङ्कार।

समास– यशोधनाः– यशो धनः यस्य सः, बहुब्रीहि समास। **भवादृशाः–** भवान् इव दृश्यते, कर्मधारय समास। **निराश्रया–** निरस्त आश्रयः यस्य सा, बहुब्रीहि समास।

व्याकरण– प्राप्य– प्र+आप्+ल्यप्/क्त्वा प्रत्यय। **हता–** हन् धातु+क्त+टाप् प्रत्यय। **रतिम्**–रम् धातु+क्तिन प्रत्यय। **अधिकुर्वंते**– अधि+कृ धातु+आत्मनेपद लट्लकार प्रथम पुरुष बहुवचन। **मनस्विता–** मनस्विन्+तल्+टाप् प्रत्यय।

टिप्पणी– द्रौपदी युधिष्ठिर को अनेक प्रकार से ताने मार रही हैं। फिर भी उन धर्मात्मा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। वह चाहती थी कि राजन् इस तपस्वी वेश को त्याग करके दुर्योधन के प्रति सन्धि का प्रस्ताव भेजे। परन्तु युधिष्ठिर के ऐसा न करने पर उलाहना देती रहती है।

प्रकरण– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठिर के प्रति वर्णन करते हुए कहती है कि–

अथ क्षमामेव निरस्तविक्रमः
चिराय पर्येषि सुखस्य साधनम्।
विहाय लक्ष्मीपतिलक्ष्म कार्मुकं
जटाधरः संजुहुधीह पावकम्।।44।।

अन्वय– अथ निरस्तविक्रमः चिराय क्षमाम् एव सुखस्य साधनम् पर्येषि लक्ष्मीपतिलक्ष्म कार्मुकम् विहाय जटाधरः सन् इह पावकम् जुहुधि।

श्ब्दार्थ– अथ–इसके पश्चात्। **निरस्तविक्रमः**–पराक्रम से रहित। **चिराय**–अधिक समय तक। **क्षमाम्–** शान्त को। **एव**–ही। **सुखस्य**–सुख का। **साधनम्**–साधन । **पर्येषि–** समझते हो। **लक्ष्मीपतिलक्ष्म–** राजाओं के

चिह्न। **कार्मुकम्**– धनुष। **विहाय**– त्यागकर। **जटाधरः**–जटाओं को धारण करके। **सन् इह**– इस द्वैतवन में। **पावकम्**–अग्नि। **जुहुधि**–हवन करो।

अनुवाद– प्रस्तुत श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि– हे राजन् ! मनस्विता के नष्ट होने के पश्चात् पराक्रम से रहित होकर अधिक समय तक आप शान्त को ही सुख का साधन समझते हो तो राजचिह्न धनुष को त्याग दीजिए और जटाओं को धारण करके इस द्वैतवन में अग्निदेव को हवन करो।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् भो राजन् ! यदि त्वं पराक्रम त्यक्त्वा शान्तिं एव चिराय सुखस्य साधनम् मन्यते तर्हि राजचिह्नं धनुः परित्यागकृत्वा अत्र द्वैतवने जटाधारित्वा तपस्यां करु।

कार्मुकम् धनुष का तथा **पावकम्** अग्नि का विशेषण है।

छन्द– वंशस्थ छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–अनुप्रास अलङ्कार।

समास– **निरस्तविक्रमः**– निरस्तः विक्रमः यस्य सः, बहुब्रीहि समास। **लक्ष्मीपतिलक्ष्म**– लक्ष्मयाः पतिः, षष्ठी तत्पुरुष समास। **जटाधरः**–जटाः धराः यस्य सः, बहुब्रीहि समास।

व्याकरण– **सुखस्य**– षष्ठी विभक्ति एकवचन। **साधनम**– द्वितीया विभक्ति एकवचन। **विक्रमः**– वि+क्रम+अच् प्रत्यय। **पावकः**– पौ+अकः=अयादि सन्धि। **एचोऽयवायावः** अयादि सन्धि का सूत्र है। **जुहुधि**– जुह् धातु लोटलकार मध्यम पुरुष एकवचन। **जटाधरः**– जटा+धृ+अच् प्रत्यय। **विहाय**– वि+हा+क्त्वा/ल्यप् प्रत्यय।

टिप्पणी– यहाँ पर द्रौपदी ने युधिष्ठिर पर क्रोध करते हुए व्यङ्ग्य किया है।

प्रकरण– इस श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि हे महाराज! आप द्वैतवन में रहने की प्रतिज्ञा को तोड़ दीजिए और अरि दुर्योधन ने युद्ध करने के लिए तैयार हो जाइएं–

न समयपरिरक्षणं क्षमं ते
निकृतपरेषु परेषु भूरिधाम्नः।
अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीषाः
विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि।।45।।

अन्वय– निकृतिपरेषु परेषु भूरिधाम्नः ते समयपरिरक्षणम् न क्षमम्। हि विजयार्थिनः क्षितीशाः अरिषु सोपधि सन्धिदूषणानिः विदधति।

शब्दार्थ– **निकृतिपरेषु**– अपमान करने वाले दुष्ट। **परेषु**–शत्रुओं में। **भूरिधाम्नः**–अत्यन्त तेज को धारण करने वाले। **ते**–तुम्हारे लिए। **समयपरिरक्षणम्**–समय की प्रतीक्षा करना। **न क्षमम्** उचित नहीं है। **हि**–क्योंकि। **विजयार्थिनः**–विजय की इच्छा रखने वाले। **क्षितीशाः**–राजा। **अरिषु**–शत्रुओं के विषय में। **सन्धिदूषणानिः**–युद्ध को भंग करने के लिए ली गई प्रतिज्ञा **सोपधि**– कपट पूर्वक। **विदधति**–धारण करते है।

अनुवाद– द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि हे महाराज! अपमान करने वाले दुष्ट शत्रुओं के द्वारा हम सभी का हमेशा तिरस्कार किया गया। आप तो अत्यन्त तेज को धारण करने वाले है। अतः तुम्हें समय

की प्रतिक्षा नहीं करनी चाहिए। क्योंकि विजय की इच्छा रखने वाले राजा लोग शत्रूओं के साथ किये गये युद्ध को छल कपट पूर्वक भंग कर देते है।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति यत् भो राजन् ! अरिषु अपमानाय तत्परेषु महाबलिशालिनः त्वं प्रतिज्ञापालनम् न युक्तं यत् हि विजयाभिलाषिणः राज्ञः शत्रुन् प्रति सकपटं युद्धदोषान् सम्पादयन्ति।

अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीषाः विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि। यह सूक्तिपरक वाक्य है। द्रौपदी युधिष्ठिर के प्रति कहती है।

छन्द–पुष्पिताग्रा छन्द।

रस– वीर रस।

रीति–पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–अर्थान्तरन्यास अलङ्कार।

समास– समयपरिरक्षणम्– समयस्य परिरक्षणं, षष्ठी तत्पुरुष समास। **भूरिधाम्नः–** भूरिः धामः यस्य सः, बहुब्रीहि समास। **विजयार्थिनः–** विजयस्य आर्थिनः, षष्ठी तत्पुरुष समास।

व्याकरण– अरिषु– सप्तमी विभक्ति बहुवचन। **परेषु–** सप्तमी विभक्ति बहुवचन। **परिरक्षणम्–** परि+रक्ष्+ल्युट् प्रत्यय। 'परि' उपसर्ग 'रक्ष्' धातु और ल्युट् प्रत्यय है। **विदधति**–लट्लकार प्रथम पुरुष एकवचन।

टिप्पणी– इस श्लोक में राजाओं की कूटनीति का वर्णन किया गया है।

प्रकरण– दुर्योधन के हस्तिनापुर से समाचार वापस लेकर आये हुए वनेचर के मुखारविन्द से उसकी प्रशंसा सुनते ही क्रोध में आकर द्रौपदी ने युधिष्ठिर पर अनेक प्रकार से ताने मारना प्रारम्भ किया। किन्तु उचित समय पर उन्हें सलाह देकर, उनके समृद्धि के लिए याचना करते हुए कहती है कि– आप साहस और वीरता के साथ युद्ध के लिए तैयार हो जाइए तभी आप पुनः राजलक्ष्मी को प्राप्त कर सकते हैं–

विधिसमयनियोगाद् दीप्तिसंहारजिह्वां
षिथिलवसुमगाधे मग्नमापत्योधौ।
रिपुतिमिरमुदस्योदीयमानं दिनादौ
दिनकृतमिव लक्ष्मीस्त्वां समभ्येतु भूयः।।46।।

अन्वय– विधिसमय नियोगात् अगाधे आपत्पयोधौ मग्नं दीप्तिसंहार जिह्वं शिथिलवसुं रिपुतिमिरं उदस्य उदीयमानं त्वां दिनादौ दिनकृतमिव लक्ष्मीः भूयः समभ्येतु।

शब्दार्थ– विधिसमय नियोगात्– भाग्य तथा समय के अनुकूल होने से। **अगाधे–** अत्यधिक दुष्कर। **आपत्पयोधौ–** दुःखरूपी समुद्र में। **मग्नं–** डूबे हुए। **दीप्तिसंहार जिह्वं** – प्रकाश के नष्ट होने से। **शिथिलवसुं–** कान्तिरहित। **रिपुतिमिरं–** अन्धकार के समान शत्रु को। (**दिनकृतं–** सूर्य) **उदस्य–** नष्ट करके। **त्वां दिनादौ** – तुम (युधिष्ठिर) दिन के प्रारम्भ में। **उदीयमानं–** समृद्धि को प्राप्त करते हुए। **दिनकृतमिव**– सूर्य के समान। **भूयः–** फिर से। **लक्ष्मीः**– राजलक्ष्मी को। **समभ्येतु–** प्राप्त करें।

अनुवाद– इस श्लोक में द्रौपदी युधिष्ठिर से कहती है कि हे राजन् ! भाग्य और समय के अनुकून होने से यदि अत्यधिक दुःखरूपी समुद्र में डूब जाए, प्रकाश के नष्ट हो जाने पर कान्ति से रहित हो जाए

किन्तु सूर्य अन्धकार को नष्ट कर देता है। इस प्रकार तुम सूर्य के समान दिन के प्रारम्भ में समृद्धि को प्राप्त करते हुए, फिर से राजलक्ष्मी को प्राप्त कीजिए।

संस्कृत अनुवाद– अस्मिन् श्लोके मङ्गलकामनां कुर्वन् द्रौपदी युधिष्ठिरं प्रति कथयति भो राजन् भाग्य कालयोः अनुकूलः अतिदुस्तरे गम्भीरे च आपत्तिसमुद्रे पतितं तेजोविनाशेन खिन्नमानसोऽपि भवान् सूर्यः इव शत्रुरूपअन्धकारं विनाश्य राजलक्ष्मी पुनः प्राप्नोतु।

छन्द–मालिनी छन्द।

रस– वीर रस।

रीति– पाञ्चाली रीति।

गुण– प्रसाद गुण।

अलङ्कार–उपमा अलङ्कार।

समास– दिनादौ– दिनस्य आदौ, षष्ठी तत्पुरुष समास। **विधिसमय–** विधश्च समयश्च, द्वन्द्व समास।

व्याकरण– नियोग– नि+युज्+घञ्। **उदीयमानं–** शानच् प्रत्यय। **कृत**– कृ+क्त प्रत्यय। **उदस्य–** षष्ठी विभक्त एकवचन। **संहार–** सम्+हृ+घञ् प्रत्यय।

टिप्पणी– यहां पर द्रौपदी ने भविष्य में राजलक्ष्मी को प्राप्त करने के लिए युधिष्ठिर के प्रति मङ्गलकामना की है।

प्रमुख सारगर्भित सूक्तियां

1.न हि प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः।
हितैषी लोग असत्य प्रिय वचन कहने की इच्छा नहीं करते है।

2. **हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः।**
वनेचर कहता है कि इस संसार में हितकर और प्रिय वचन बहुत ही दुर्लभ है।

3.**न किं सखा साधु न षास्ति योऽधिपं हितान्न यः संषृणुते न किंप्रभुः।**
जो अमात्य व सेवक अपने स्वामी को उचित उपदेश नहीं देता है वह कुमित्र व कुसेवक है। जो राजा अपने सेवक का (मंत्री व अमात्य) उचित उपदेश नहीं सुनता है। वह कुस्वामी होता है।

4. **सदानुकूलेषु हि कुर्वते रतिं नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः।**
राजा और मंत्रियों के सदैव अनुकूल रहने पर सभी सम्पत्तियां अनुराग करती है अर्थात् सुलभता से प्राप्त हो जाती है।

5. **समुन्नयन् भूतिमनार्यसङ्गमाद् वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः।**
नीच व्यक्तियों के सङ्गति में रहने की अपेक्षा महात्माओं के साथ विरोध करना श्रेष्ठ होता है। क्योंकि वह समान रूप से उन्नति कराने वाला होता है।

6. **अहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता।**
अरे ! बलवान् लोगों के साथ विरोध करना कष्ट देने वाला होता है।

7. **व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।**
द्रौपदी कहती है कि जो मूर्ख लोग दुष्टों के प्रति दुष्टता का व्यवहार नहीं करते हैं वे निश्चय ही पराजय को प्राप्त होते हैं।

8. **अवन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापदां भवन्ति वष्याः स्वयमेव देहिनः।**
जो लोगों के कष्टों को दूर करने में समर्थ है तथा जिसका क्रोध कभी बेकार नही जाता ऐसे व्यक्ति के वष में लोग स्वयं हो जाते है।

9. **विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः।**
निश्चय ही लोगों की चित्तवृत्तियां विविध रूपों वाली होती हैं।

10.**पराभवोऽप्युत्सव एव मानिनाम्।**
माननीय लोगों के लिए पराजय ही उत्सव का कारण होता है।

11.**व्रजन्ति शत्रूनवधूय निः स्पृहाः शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः।**
मुनि लोग इच्छा से रहित होकर, शत्रूओं को जीतकर शान्ति द्वारा सिद्वि को प्राप्त करते हैं जबकि राजा लोग नहीं।

12.**अरिषु हि विजयार्थिनः क्षिताषा विदधति सोपधि सन्धिदूषणानि।**
विजय की इच्छा रखने वाले राजा लोग शत्रूओं के साथ किये गये युद्ध को छल कपट पूर्वक भङ्ग कर देते हैं।

अति लघु उत्तरीय महत्त्वपूर्ण प्रश्न

प्रश्न–1. किरातार्जुनीयम् के लेखक कौन है।
उत्तर– महाकवि भारवि।
प्रश्न–2. किरातार्जुनीयम् किस कोटि का महाकाव्य है।
उत्तर– बृहदत्रयी महाकाव्य है।
प्रश्न–3. महाकवि भारवि ने कितने ग्रंथ लिखे हैं।
उत्तर–. मात्र एक महाकाव्य ।
प्रश्न–4. भारवि के माता का क्या नाम था।
उत्तर– सुशीला
प्रश्न–5. भारवि के पिता का क्या नाम था।
उत्तर– श्रीधर
प्रश्न–6. भारवि के भार्या या पत्नी का क्या नाम था।
उत्तर– रसिका
प्रश्न–7. किरातार्जुनीयम् महाकाव्य का कथानक लिया गया है।
उत्तर– महाभारत वनपर्व से।
प्रश्न–8. किरातार्जुनीयम् का मंगलाचरण है।
उत्तर– वस्तुनिर्देशात्मक।
प्रश्न–9. मंगलाचरण में कौन सा छन्द है।
उत्तर– वंशस्थ छन्द।
प्रश्न–10. किरातार्जुनीयम् महाकाव्य का प्रारम्भ किस शब्द से हुआ है।
उत्तर– श्री शब्द से।
प्रश्न–11. किरातार्जुनीयम् महाकाव्य का अन्त किस शब्द से हुआ है।
उत्तर– लक्ष्मी शब्द से।
प्रश्न–12. महाकवि भारवि का वास्तविक नाम क्या है।
उत्तर– दामोदर
प्रश्न–13. महाकवि भारवि किसके उपासक थे।
उत्तर– शिव कि उपासक थे।
प्रश्न–14. महाकवि भारवि की वाणी को नारियल के समान मधुर किसने कहा है।
उत्तर– मल्लिनाथ ने।
प्रश्न–15. किरातार्जुनीयम् का विभाजन किया गया है।
उत्तर– सर्गों में।
प्रश्न–16. किरातार्जुनीयम् में कुल कितने सर्ग हैं।
उत्तर– 18 सर्ग (अट्ठारह सर्ग)।
प्रश्न–17. किरातार्जुनीयम् में कितने सर्ग को पाषाणत्रय कहते हैं।
उत्तर– प्रथम तीन सर्ग को। (प्रथम, द्वितीय, तृतीय सर्ग)

प्रश्न–18. किरातार्जुनीयम् में कुल कितने श्लोक हैं।

उत्तर– 1030 श्लोक।

प्रश्न–19. किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के प्रथसर्ग में कितने श्लोक है।

उत्तर– कुल 46 श्लोक।

प्रश्न–20 कौन–कौन से बृहद्त्रयी ग्रंथ हैं।

उत्तर– किरातार्जुनीयम्, शिशुपालवधम्, नैषधीयचरितम्।

प्रश्न–21. लघुत्रयी ग्रंथ कौन–कौन से हैं

उत्तर– रघवंशमहाकाव्यम्, कुमारसम्भवम् महाकाव्य, मेघदूतम् खण्डकाव्यम्।

प्रश्न–22. लघुत्रयी ग्रंथों की रचना किसने की है।

उत्तर– महाकवि कालिदास

प्रश्न–23. बृहद्त्रयी ग्रंथों के लेखक कौन है।

उत्तर– भारवि, माघ, श्रीहर्ष।

प्रश्न–24. भारवि किसके लिए प्रसिद्ध है।

उत्तर– अर्थगौरव के लिए।

प्रश्न–25. आत्रपत्र की उपाधि किसे दी गयी है।

उत्तर– महाकवि भारवि को।

प्रश्न–26. भारवि का प्रमुख अलङ्कार है।

उत्तर– चित्रालङ्कार

प्रश्न–27. भारवि का समय है।

उत्तर– 600 ई0 (छठी शताब्दी उत्तरार्द्ध)

प्रश्न–28. दुर्योधन कहाँ का राजा था।

उत्तर– हस्तिनापुर का

प्रश्न–29. युधिष्ठिर का दूत कौन था।

उत्तर– वनवासी वनेचर

प्रश्न–30. पाण्डव किस वन में निवास करते थे।

उत्तर– द्वैतवन में।

प्रश्न–31. किरातार्जुनीयम् में अर्जुन की उपमा किससे दी गयी है।

उत्तर– इन्द्र से।

प्रश्न–32. किरातार्जुनीयम् में कथानक की दृष्टि से कितने सर्ग पर्याप्त थे।

उत्तर– 4–5 सर्ग।

प्रश्न–33. पाण्डव द्वैतवन में कितने वर्ष तक निवास किये थे।

उत्तर– 13 वर्ष तक।

प्रश्न–34. पाण्डवों ने कितने वर्ष तक अज्ञातवास के रूप में निवास किये थे।

उत्तर– 1 वर्ष तक (एक साल तक)।

प्रश्न–35. किरातार्जुनीयम् में 'उरग' शब्द से किसको उपमित किया गया है।

उत्तर– दुर्योधन को।

प्रश्न–36. भारवि की कविता पर किसकी कविता का प्रभाव पड़ा है।

उत्तर– महाकवि कालिदास की कविता का।

प्रश्न–37. किरातार्जुनीयम् में वर्णिलिङ्गी किसका विशेषण है।

उत्तर– वनेचर का

प्रश्न–38. किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग में वनेचर किससे वार्तालाप करता है।

उत्तर– युधिष्ठिर से।

प्रश्न–39. किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग में कौन किससे वार्तालाप करता है।

उत्तर– वनेचर युधिष्ठिर से।

प्रश्न–40. द्वैतवन में युधिष्ठिर के पास कौन आता है।

उत्तर– वनेचर आता है।

प्रश्न–41. द्रौपदी युधिष्ठिर को किसके प्रति युद्ध के लिए प्रेरित करती है।

उत्तर– दुर्योधन के प्रति।

प्रश्न–42. वनेचर द्वैतवन में युधिष्ठिर से मिलने किस वेशभूषा में आया था।

उत्तर– ब्रह्मचारी के वेशभूषा में।

प्रश्न–43. द्रौपदी ने युधिष्ठिर की उपमा किससे दी है।

उत्तर– मद उन्मत्त हाथी से।

प्रश्न–44. किरातार्जुनीयम् में राजलक्ष्मी की उपमा किससे की गई है।

उत्तर– माला से

प्रश्न–45. किरातार्जुनीयम् में कठोर भूमि पर कौन शयन करता है

उत्तर– नकुल और सहदेव।

प्रश्न–46. किरातार्जुनीयम् में सेवक, राजा और सैनिक से युक्त होते हुए भी कौन किससे भयभीत रहता है।

उत्तर– दुर्योधन युधिष्ठिर से।

प्रश्न–47. दुर्योधन के समाचार को सुनकर वनेचर किसके पास आया ?

उत्तर– युधिष्ठिर के पास।

प्रश्न–48. युधिष्ठिर के पास आकर वनेचर ने सर्वप्रथम क्या किया।

उत्तर– प्रणाम किया ।

प्रश्न–49. दुर्योधन की पत्नी का क्या नाम था।

उत्तर– भानुमती।

प्रश्न–50. दुःशासन को युवराज के पद पर नियुक्त करके यज्ञकार्य कौन प्रारम्भ करता है।

उत्तर– दुर्योधन यज्ञकार्य को प्रारम्भ करता है।

प्रश्न–51. माघ के काव्य पर भारवि का प्रभाव दिखाई देता है।

उत्तर– क्योंकि महाकवि भारवि, माघ के पूर्ववर्ती कवि है।

प्रश्न–52. किरातवेशधारी किसका विशेषण है।

उत्तर– शिव का।

प्रश्न–53. अर्जुन और शिव का युद्ध किस पर्वत पर हुआ था।

उत्तर– इन्द्रकील पर्वत पर।

प्रश्न–54. किरातार्जुनीयम् का प्रतिनायक कौन है।

उत्तर– शिव अर्थात् शंकर।

प्रश्न–55. किसकी आज्ञा पाकर वनेचर ने दुर्योधन का समाचार बताना शुरु किया।

उत्तर –युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर।

प्रश्न–56. इस महाकाव्य का नाम किरातार्जुनीयम् क्यों रखा गया।

उत्तर– अर्जुन और किरात के बीच युद्ध होने के कारण इस काव्य का नाम किरातार्जुनीयम् रखा गया।

प्रश्न–57. किरातार्जुनीयम् महाकाव्य का फल किस रूप में प्राप्त हुआ है।

उत्तर– अर्जुन को दिव्य पाशुपत अस्त्र के रूप में।

प्रश्न–58. किरात ने अर्जुन को कौन सा अस्त्र प्रदान किया था।

उत्तर– पाशुपत अस्त्र।

प्रश्न–59. युधिष्ठिर अपना राज्य किस क्रीड़ा में हारे थे।

उत्तर– द्युतक्रीड़ा में

प्रश्न–60. द्वैतवन में पाण्डवों के विनास का प्रमुख कारण क्या था।

उत्तर– दुर्योधन की कपट भरी नीति मुख्य कारण था।

प्रश्न–61. भारवि की काव्य प्रतिभा को बाहर से कठोर और भीतर से रसार्द्र किसने कहा है।

उत्तर– मल्लिनाथ ने।

प्रश्न–62. युधिष्ठिर से वनेचर ने किस प्रकार की वाणी में वार्तालाप किया।

उत्तर– सौष्ठव–औदार्य से युक्त वाणी में।

प्रश्न– 63. संसार में किस प्रकार के वचन दुर्लभ होते हैं।

उत्तर– हितकर और मनोहर वचन।

प्रश्न–64.सुयोधन किसका विशेषण है।

उत्तर– दुर्योधन का

प्रश्न–65. सत्यधनस्य किसका विशेषण है।

उत्तर– युधिष्ठिर का।

प्रश्न–66.द्रुपदात्मजा किसका विशेषण है।

उत्तर– द्रौपदी का।

प्रश्न–67. मादृशां गिरः किसका विशेषण है।

उत्तर– वनेचर का

प्रश्न–68. मादृशां गिरः का अभिप्राय क्या है।

उत्तर– मुझ जैसे वनेचर की वाणी।

प्रश्न–69. वृकोदरः किसका विशेषण है।

उत्तर– भीम का

प्रश्न–70. धनञ्जय किसका विशेषण है।

उत्तर– अर्जुन का

प्रश्न–71. लोहितचन्दन शब्द किसका पर्याय है।

उत्तर– भीम का।

प्रश्न–72. वासव शब्द किसका अभिप्राय है।

उत्तर– इन्द्र का

प्रश्न–73. अर्जुन के पराक्रम की उपमा किसके दी गयी है।

उत्तर– इन्द्र के पराक्रम से।

प्रश्न–74. गजौ शब्द से उपमित किया गया है

उत्तर– नकुल और सहदेव को।

प्रश्न–75. धृतसंयमौ यमौ वाक्य में यमौ शब्द किसके लिए प्रयुक्त हुआ है।

उत्तर– नकुल और सहदेव के लिए ।

प्रश्न–76. अर्जुन किस देश पर विजय प्राप्त किया था

उत्तर– कुरुदेश पर।

प्रश्न–77. भरी सभा में किये गये अपमान का स्मरण करके कौन दुःखी होता है।

उत्तर– द्रौपदी दुःखी होती है।

प्रश्न–78. अर्जुन द्वैतवन में क्या लाते थे।

उत्तर– पेड़ों की छाल।

प्रश्न–79. द्वैतवन में नकुल–सहदेव किस पर शयन करते थे।

उत्तर– पथरीली भूमि पर।

प्रश्न–80. षड्रिपु कौन–कौन से है।

उत्तर– काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य।

प्रश्न– 81. राज्यरूपी शरीर का अङ्ग किसे कहा गया है।

उत्तर– गुप्तचरों के नेत्र को।

प्रश्न–82. जो सेवक राजा को उचित सलाह नहीं देता है, उसे क्या कहते हैं।

उत्तर– अहितैषी कहते हैं।

प्रश्न–83. दुरोदर शब्द का क्या अर्थ है।

उत्तर– जुआ

प्रश्न–84. दुर्योधन सज्जनों के साथ कैसा व्यवहार करता था।

उत्तर– बन्धु–बान्धुओं के समान।

प्रश्न–85. दुर्योधन अपने सेवकों को क्या देता था

उत्तर– पुरस्कार।

प्रश्न–86. कुबेर के समान धन सम्पन्न कौन था

उत्तर– दुर्योधन था।

प्रश्न–87. जो देश वर्षा पर निर्भर रहता है, उसे क्या कहते हैं।

उत्तर– देवमातृका।

प्रश्न–88. जो देश वर्षा पर निर्भर नहीं रहता है, उसे क्या कहते हैं।

उत्तर– अदेवमातृका।

प्रश्न–89. दुर्योधन किस देश पर शासन करता था।

उत्तर– कुरुदेश पर।

प्रश्न–90. दुर्योधन का सभामण्डप किससे गीला रहता था।

उत्तर– हाथियों के मदजल से।

प्रश्न–91. दुर्योधन किसके सहयोग से धर्म का उल्लंघन रोक लेता है।

उत्तर– राजदण्ड के सहयोग से।

प्रश्न– 92. राजा को शत्रु के साथ शत्रुता का व्यवहार करना चाहिए यह कथन किसका है।

उत्तर– द्रौपदी का।

प्रश्न–93. युधिष्ठिर ने वनेचर की बात सुनकर क्या दिया था

उत्तर– पुरस्कार दिया था।

प्रश्न–94. सम्यग् विनियोग सत्क्रिया यह किसका कथन है।

उत्तर– वनेचर का।

प्रश्न–95. सम्यग् विनियोग सत्क्रिया, यह कथन वनेचर ने युधिष्ठिर से किसके प्रति कहा है।

उत्तर– दुर्योधन के प्रति।

प्रश्न–96. अर्जुन का नाम सुनकर दुर्योधन किसके समान नतमस्तक होकर दुःखी हो जाता है।

उत्तर– सर्प के समान।

प्रश्न–97. राजनीति में परिस्थिति के अनुकूल रहने पर किसके सम्पत्ति में वृद्धि होती है।

उत्तर– राजा और मंत्रियों की सम्पत्ति में।

प्रश्न–98. द्रौपदी युधिष्ठिर को राजचिन्ह् त्याग करके, क्या धारण करने के लिए कहती हैं।

उत्तर– जटाएं धारण करने के लिए।

आचार्यों द्वारा प्रसिद्ध कतिपय महाकाव्य विषयक कारिकाएं–

क्र. सं.	**रचनाएं**	**कारिका**	**कथन**
1.	काव्यालङ्कार	शब्दार्थौं सहितं काव्यम्	आचार्य भामह
2.	काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति	कवेः कर्म काव्यम्	आचार्य वामन
3.	काव्यादर्श	शरीरंतावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली	महाकवि दण्डी
4.	काव्यप्रकाश	तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि	आचार्य मम्मट
5.	साहित्यदर्पण	वाक्यं रसात्मकं काव्यम्	आचार्य विश्वनाथ
6.	रसगङ्गाधर	रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्	पण्डितराज जगन्नाथ